सबला

वर्ष 5 : अंक 2 सेवाग्राम विकास संस्थान, नई दिल्ली जून-जुलाई, 1992

इस अंक में

हमारी बात 1

औरत की दो तस्वीरें 2
—गीता गैरोला

धीरे-धीरे आई हममें चेतना 3
—वीणा शिवपुरी

कुछ बुनियादी सवाल 5
—कमला भसीन

संगठन: क्यों और कैसे 9

आओ पूछें हम भी सवाल 11
—वीणा शिवपुरी

चमत्कारी बाबाओं के जाल में न फंसें 13
—सुहास कुमार

कहानी न्याय के लिए लड़ाई की 16
—पुष्पा, रेणुका व अजीत

बाल-विवाह का कलंक मिटाएं 20
—रेणुका पामेचा

जो पढ़े, वह बढ़े 22
—कृष्णा कुमारी सिंह

हर औरत का सपना 23
—वीणा शिवपुरी

पक्का हो इरादा: सफलता मिलेगी ज़रूर 26
—कान्ता मारवा

इनसे प्रेरणा लें 29
—महेश पुनमिया

हिम्मत की मिसाल 29
—मृदुला जोशी

महिला पंच: श्रीमती भौती 30
—रीता चतुर्वेदी

क्या आपको सही राशन मिलता है 31
—सबला संघ

पाठकों की कलम से 32

'सबला' के लेखों पर चर्चा 34
—अनिता ठेनुआं

लक्ष्मी का जीवन सुधरा 36
—अलका नांगिया

सहयोग मंडल

कमला भसीन

सुहास कुमार

वीणा शिवपुरी

ज्ञानेंद्र प्रसाद जैन

'जागोरी' समूह

प्रतिभा गुप्ता

रचना बड़ोदिया

(चित्रांकन : मुख्य पृष्ठ)

ग्रामीण बहनों की द्विमासिक पत्रिका—शिक्षा विभाग, मानव संसाधन मंत्रालय, भारत सरकार तथा 'नोराड', नई दिल्ली द्वारा अनुदानप्रदत; डाक्टर शारदा जैन (सेवाग्राम विकास संस्थान, 1 दरियागंज, नई दिल्ली-110 002) द्वारा संपादित व प्रकाशित तथा इन्द्रप्रस्थ प्रेस (सी. बी. टी.), नेहरू हाउस, 4 बहादुरशाह जफर मार्ग, नई दिल्ली-110 002 में मुद्रित।

हमारी बात

'सबला' पत्रिका जितनी औरतों के लिए पढ़ने योग्य है उतनी ही या उससे भी अधिक पुरुषों के लिए है। रूढ़ियों की जकड़ कम करने और बेटियों-बहुओं के साथ बेइंसाफी व जुल्म खत्म करने में पुरुषों का भारी योगदान होना चाहिए। स्त्रियों को ही बार-बार यह बताते रहने से कि उन्हें अपने हक पाने के लिए जूझना होगा, काफी नहीं है। वे अपने हकों के प्रति जागरूक हो जाती हैं, पर उन्हें पाने में बहुधा असमर्थ रहती हैं, यदि पुरुष उनका साथ न दें।

प्रेरक भाइयों से हमारा सविनय अनुरोध है कि वे एक पखवाड़े में एक बार अवश्य अपने क्षेत्र के नव-साक्षर पुरुषों व समूचे ग्राम समाज के पुरुष वर्ग की मीटिंग बुलाएं। उसमें 'सबला' में छपे लेखों पर चर्चा करें। तभी चेतना जागेगी और समस्याओं के निराकरण के रास्ते निकलेंगे।

मिसाल के तौर पर अप्रैल-मई के अंक में 'हमारी बेड़ियां' लेख छपा था। यदि वह पत्रिका के पन्नों में ही कैद रहा तो उसका क्या लाभ? कोदरी बाई थोड़ी सी तकलीफ़ का इलाज कराने गई थी और एक अज्ञानी भोपा के चक्कर में पड़ कर अपनी जान गंवा बैठी। पर क्या यह हादसा केवल एक गांव की कोदरी बाई का है? नहीं। गांव-गांव में झाड़-फूंक करने वाले भोपा अपने अखाड़े जमाए बैठे हैं और निरंतर भोले ग्रामवासियों को ठग रहे हैं। उनका जीवन खतरे में डाल रहे हैं।

पिछले अंक में ही एक अन्य लेख 'पारिवारिक हिंसा' में लड़की के जन्म से उसकी आखिरी सांस तक उसके साथ होते दुर्व्यवहार की तस्वीर खींची गई थी। यदि पुरुष दुर्व्यवहार खत्म करने पर आमादा हो जाए तो कोई मां, सास, ननद, बेटी व बहू को सता नहीं पाएगी।

पुरुषों के लिए चुनौती है कि इस मुहिम पर मजबूत मोर्चा गाढ़ दें और अपनी बेटी व बहू को सम्मान का दर्जा दिलाने का साहसिक कदम उठाएं। इसी आशय से हमने पिछले अंक में "पुरुष पाठकों के नाम एक पत्र" शीर्षक से एक लेख भी छापा था। ऐसे लेख हर अंक में छापे जाएंगे। पुरुष और स्त्री परिवार की गाड़ी के दो पहिये हैं, यह कहते और सुनते कान पक जाते हैं। आज हम पुरुष वर्ग का आह्वान कर रहे हैं कि वे इस सूक्ति को सार्थक बना दें ताकि परिवार और समाज की गाड़ी लीक छोड़ कर सरपट दौड़ने लगे।

स्त्रियों में सृजनात्मक शक्ति की कमी नहीं। उनमें मुसीबतों को झेलने की शक्ति पुरुषों से शायद अधिक ही है। तब उनके सामर्थ्य और उनकी प्रतिभा का भरपूर उपयोग क्यों न हो? स्त्रियां आगे बढ़ना चाहें और पुरुष उनका रास्ता रोकें तो परिवार की गाड़ी का रुक जाना स्वाभाविक है। पर यदि पुरुष रास्ता न रोक कर उन्हें बढ़ावा दें तो परिवार का बोझ उठाने में पुरुषों को अधिक योगदान ही मिलेगा।

यदि 'सबला' पत्रिका के माध्यम से पुरुष वर्ग में यह चिंतन बढ़े कि स्त्रियों के हकों की लड़ाई पुरुषों की भी लड़ाई है तो परिवार व समाज में सौहार्द्र बढ़ेगा। स्त्रियों की योग्यता का पूरा लाभ समाज को मिलने लगेगा। उसी में 'सबला' की सार्थकता होगी और प्रेरक भाई सराहना के पात्र बनेंगे।

ज्ञानेंद्र प्रसाद जैन

औरत की दो तस्वीरें

तस्वीर एक

बातें करना न जाने
भूखी रह कर
काम करती जाए
पूरा न मांगे
आधे को चाहे
सबकी सुने
चुपचाप
विरोध का अर्थ न जाने
रोना न चाहे
मांगना न जाने
इच्छाओं, आकांक्षाओं से शून्य
घर की चार दीवारी में
बिना थके
चलती जाए
कैसी है वह औरत?

तस्वीर दो

बोलती है
आधा मिलने को
नकारती है
अन्याय का अर्थ
समझती है
उसकी आंखों से
झांकता है विरोध
रोती है, मार खाती है
क्योंकि, जुबान चलाती है
इच्छाओं आकाक्षांओं से भरी
घर की चार दीवारी
के कामों से थककर
शिकायत करती है
बाहर झांकती है
कैसी है वह औरत?

—गीता गैरोला

धीरे-धीरे आई हममें चेतना

वीणा शिवपुरी

आज सब तरफ जागरूकता और चेतना की बात होती है। सवाल उठता है कि आखिर यह चेतना है क्या? चेतना शब्द का संबंध है चेतन से या जागने से। जब हम किसी से कहते हैं कि 'बहना चेत जा' तो हमारा मतलब होता है संभल, जाग, होशियार हो जा। अपने प्रति अन्याय को समझ।

पहली सीढ़ी

सही और गलत की समझ, न्याय और अन्याय की समझ, अपने हकों और अधिकारों की समझ ही चेतना है। चेतना अन्याय से लड़ने की पहली सीढ़ी है। जब यह पता लग जाता है कि हमारे साथ अन्याय हो रहा है तब मन में सवाल उठता है—

ऐसा क्यों हो रहा है?

क्योंकि हम विरोध नहीं कर रहीं।

क्या विरोध करते ही हालात बदल जाएंगे?

नहीं, एकदम से नहीं। समय लगेगा। संघर्ष करना होगा।

सोचो तो, जिसके पास मनमानी करने का हक़ है वह उसे आसानी से क्यों छोड़ देगा भला। इसीलिए एक औरत के विरोध करने से कुछ न होगा। दो के करने से कुछ होगा। जब हर घर में अन्याय का विरोध होने लगेगा—तब?

तब मर्द को बदलना पड़ेगा।

समाज को बदलना पड़ेगा।

यह तभी हो सकेगा जब आज की बच्चियों में चेतना का बीज फूटेगा।

चेतना के साथी

चेतना अपने आपमें बड़ी चीज है पर उसे ताकत देने वाले कुछ साथी हैं। तभी चेतना संघर्ष का रूप ले पाती है। ये साथी हैं—शिक्षा, आत्म-सम्मान, आर्थिक आत्म-निर्भरता, सेहतमंद शरीर, अधिकारों की समझ और कानूनी जानकारी।

शिक्षा : शिक्षा का मतलब सिर्फ लिखना-पढ़ना सीखना नहीं है। वह तो ज़रिया है जानकारी पाने का। कहां क्या हो रहा है? क्यों हो रहा है? उसे कैसे बदला जा सकता है। बाकी औरतें क्या कर रही हैं? पढ़ने, लिखने, सुनने से उलझे विचारों को सुलझाने में मदद मिलती है।

आत्मसम्मान : यह शिक्षा के साथ आता है। आत्मविश्वास और आत्मसम्मान यानि अपने आप पर भरोसा बढ़ता है। अपनी इज्जत का अहसास जगता है। इसी से मिलती है अन्याय से लड़ने की ताक़त।

आर्थिक आत्म-निर्भरता : हर तबके की औरत सदियों से भरपूर मेहनत करती आई है। खेत-खलिहान, घर-दूकान, मिल-कारखाने इसके सबूत हैं। पूरी दुनिया की मेहनत का दो तिहाई हिस्सा औरतों की मेहनत का होता है। लेकिन उन्हें कुल आमदनी का सिर्फ दसवां हिस्सा मिलता है। यानि उनका ज्यादातर काम मुफ्त होता है। औरत के काम का भुगतान हो। उस रुपए पर उसका हक़ हो। इससे औरत की ताकत बढ़ेगी।

सेहतमंद शरीर : औरत के लिए जीना भी एक संघर्ष है। फिर इज्जत और समानता से जीने की लड़ाई तो अभी सामने है। औरत अपने हिस्से से ज्यादा मेहनत करती है पर अपने हिस्से का खाना, इलाज और देखभाल नहीं पाती। यह लड़ाई भी खुद उसे ही लड़नी है। अपने लिए और अपनी बेटियों के लिए।

अधिकारों की समझ : बेटियों को ग़म खाने और आंसू पीने का पाठ नहीं पढ़ाना है। मिल-बांट कर बराबर खाना और इज्जत से जीना सिखलाना है। यही शिक्षा उसे अपने अधिकारों की समझ देगी। खाने-पीने, घूमने, पढ़ने, लाड़-प्यार और माता-पिता की जायदाद में उसका भी भाई के बराबर हिस्सा है।

कानूनी जानकारी : इस देश का कानून स्त्री और पुरुष को बराबर मानता है। जब कानूनों का इस्तेमाल न हो वे किताबों में बंद काले अक्षर ही रहते हैं। इसलिए अपने कानूनी अधिकारों की जानकारी होना ज़रूरी है।

इन सब साथियों की मदद से चेतना की धार और पैनी होगी।

गांठ बांध लेने वाली बातें

लड़के-लड़की में ऊंच-नीच भगवान या कुदरत ने नहीं बनाई। यह भेदभाव पितृसत्तात्मक समाज की वजह से है।

चेतना से औरत ताकतवर बनेगी। तभी पितृसत्ता को चुनौती दी जा सकती है।

शिक्षा, सेहत, भोजन, मनोरंजन, देखभाल पाने का बेटी को भी उतना ही हक़ है जितना बेटे को।

अन्याय करना बुरा है और अन्याय सहना भी। उससे अन्याय को बढ़ावा मिलता है।

आमतौर पर अपने हक़ पाने के लिए संघर्ष करना पड़ता है।

''अब रुकेंगे न किसी भी हाल, आ गई चेतना
अब पूछेंगे हम खूब सवाल, आ गई चेतना''

मैं एक औरत हूं

मैं एक औरत हूं
सुनी है मेरी गर्जना!
गिनती में हैं कम नहीं
यों नकारे जा सकते नहीं
हूं बहुत कुछ जानती मैं
वापस नहीं जा सकती मैं
सुन चुकी हूं सब बार-बार
मैं थी गिरी ज़मीं पर
नहीं गिरा सकता कभी फिर
कोई मुझे ज़मीं पर

मैं एक औरत हूं
मुझे बढ़ते देखो
मुझे पैरों पर खड़ा होते देखो
प्यार से हाथ फैलाते देखो
दूर बहुत दूर

यह है एक शुरुआत
जाना है अभी बहुत दूर
समझाना है अपने भाई को
कर सकती हूं बहुत कुछ
हूं बहुत मजबूत और ताक़तवर
झुका न सकेगा अब कोई मुझे
मैं एक औरत हूं।

सुश्री हेलेन रेड्डी की कविता
का हिन्दी रूपांतर—सुहास कुमार

पुरुष पाठकों के लिए विशेष

कुछ बुनियादी सवाल

कमला भसीन

पिछले अंक (अप्रैल-मई, 1992) में हमने पुरुष पाठकों के नाम एक पत्र छापा था। उसमें हमने एक बुनियादी मुद्दा उठाया था कि समाज में औरत का दर्ज़ा तभी बराबर होगा जब पुरुष अपना सहयोग देंगे। समाज में बदलाव लाने के लिए पुरुषों को स्त्रियों के शोषण के प्रति अपना नज़रिया बदलना होगा।

इसी मुद्दे को आगे बढ़ाते हुए हम नारीवाद से संबंधित कुछ अफवाहों के बारे में इस बार लिख रहे हैं। नारीवाद और महिला आंदोलन के बारे में कई बार यह पूछा जाता है कि पुरुषों के बारे में इनके क्या विचार हैं। क्या नारीवादी पुरुषों के खिलाफ हैं और उनसे नफ़रत करती हैं?

हमारा जवाब है, नहीं।

गलत ढांचा

नारीवाद पुरुषों से नफ़रत नहीं करतीं। कम से कम दक्षिण एशिया में तो ऐसी किसी नारीवादी को नहीं जानते जो पूरी पुरुष जाति से नफ़रत करने की बात करती है। जैसा हमने पहले कहा, समस्या व्यक्तिगत पुरुषों या स्त्रियों की नहीं है। चूंकि यह समस्या पूरे ढांचे व विचारधारा की है इसलिए हमारी नाराज़गी पूरे ढांचे से है। हम पितृसत्ता का व इसको मज़बूत बनाने वाली सब ताक़तों व व्यक्तियों का विरोध करते हैं। अगर पौरुष या मर्दानगी का मतलब है रौब और धौंस जमाना, हिंसात्मक व आक्रामक व्यवहार करना, मारना-पीटना, औरतों को अपनी संपत्ति समझना, अपने से कमतर समझना तो हम बेशक ऐसे पौरुष या मर्दानगी के खिलाफ़ हैं। हम उन मर्दों (व स्त्रियों) के भी खिलाफ़ हैं जो पुरुष सत्ता को बनाए रखना चाहते हैं। लेकिन हर मर्द से हमारी लड़ाई हो ऐसा नहीं है।

यहां पर हम यह भी कहना चाहती हैं कि हम उन स्त्रियों के भी खिलाफ़ हैं जो सत्ता में पहुंच कर "मर्दाना" हरकतें करती हैं, जो औरों को नीचा दिखाने की कोशिश में रहती हैं, जो पुरुषों जैसा ही आक्रामक व्यवहार करती हैं। दूसरी तरफ़, वे पुरुष जो पितृसत्ता को गलत समझते हैं, जो स्त्री और पुरुष में बराबरी चाहते हैं व इसके लिए प्रयत्न भी करते हैं, नारीवादी संघर्ष में हमारे साथी हैं। सो बात सिर्फ़ स्त्री या पुरुष होने की नहीं है। बात है विचारों की, नज़रिये की, मान्यताओं व मूल्यों की।

हमारा विश्वास है कि ठीक उसी तरह जैसे स्त्रियां जन्म से ही अधिक स्नेहमयी व त्यागमयी नहीं होतीं वैसे ही पुरुष भी स्वाभाविक रूप से आक्रामक व दमनकारी नहीं होते। वास्तव में वे भी सामाजिक संस्कारों और रूढ़ियों के उतने ही शिकार हैं जितनी कि स्त्रियां। वे भी समाज द्वारा निर्धारित छवियों, भूमिकाओं के फंदे में फंसे हैं। जैसे औरत कोई हिम्मत का काम नहीं कर सकती वैसे ही मर्दों को रोने की या ममता दिखाने की

इजाज़त नहीं है। हमारी समस्या यह है कि अधिकांश पुरुष इस बंधन को पहचानते नहीं तथा कुछ ही बंधन मुक्त होकर अधिक मानवीय, सच्चे लोकतांत्रिक बनना चाहते हैं। यही नहीं, स्त्रियों द्वारा उन्हें इस बात की पहचान कराने की कोशिश भी उन्हें पसंद नहीं आती।

बदलाव नहीं चाहते

एक अन्य सवाल जो अक्सर हमसे पूछा जाता है कि अगर पुरुष भी सामाजिक रूढ़ियों में बंधे हैं और स्त्रियों की मुक्ति से इतने नज़दीक से जुड़े हैं तो वे नारीवाद से घबराते क्यों हैं।

पुरुष नारीवाद से घबराते हैं क्योंकि वे बदलाव नहीं चाहते। मौजूदा हालात उन्हें ज़्यादा फायदेमंद नज़र आते हैं। नारीवाद समाज में काम की जगह और घर में पुरुष की श्रेष्ठता को चुनौती देता है। नारीवाद पुरुष के अधिकार को योग्यता के बजाए केवल लिंग पर आधारित होने के कारण नहीं मानता। नारीवाद पुरुषों को उनके नज़रिए और व्यवहार की परख करने के लिए विवश करता है। यही कुछ कारण हैं कि पुरुषों के लिए नारीवाद का स्वागत करना आसान नहीं। कोई भी शासक खुशी-खुशी अपनी गद्दी और अधिकार नहीं छोड़ता।

पुरुष नारीवाद से घबराते हैं क्योंकि वे परिवर्तन नहीं चाहते, चाहे उसमें उनका भी भला हो। परिस्थितियां अधिक स्पष्ट रूप से उन्हें फ़ायदेमंद नज़र आती है। चूंकि नारीवाद समाज में, कार्य के स्थान और घर में पुरुष श्रेष्ठता को चुनौती देता है, चूंकि वह उस पुरुष आधिपत्य को नहीं मानता जो योग्यता नहीं लिंग पर आधारित है, चूंकि वह पुरुषों को उनके दृष्टिकोण व व्यवहार की परख करने के लिए विवश करता है। अतः उनके लिए नारीवाद का स्वागत करना न तो आसान है और न ही आनन्ददायक। कोई भी शासक प्रसन्नतापूर्वक अपनी गद्दी व अपना आधिपत्य नहीं छोड़ता।

वर्तमान पितृसत्ता व्यवस्था ने पुरुषों को जन्म से ही ऊंचा दर्ज़ा, प्यार सम्मान व अन्य कई सुविधाएं दे रखी हैं। ये सभी चीजें लड़कों का जन्मसिद्ध अधिकार हैं, लड़कियों का नहीं। इसके अलावा लड़के के लिए बेहतर भोजन, बेहतर चिकित्सा सुविधा, बेहतर शिक्षा मुहैया कराई जाती है।

बेबुनियाद डर

इसके अतिरिक्त पुरुषों के मन में स्वतंत्र व योग्य स्त्रियों के संबंध में भी डर है। वे डरते हैं कि स्त्रियां नौकरियों के लिए उनके साथ मुकाबला करेंगी। यदि स्त्री को मुख्य रूप से केवल गृहिणी समझें तो उसे जब आवश्यकता हो नौकरी में रखा जा सकता है और आवश्यकता न होने पर निकाला जा सकता है। यदि उनकी भूमिका की परिभाषा बदल जाती है और उनकी अपने आपको आगे बढ़ाने की योग्यता व क्षमता बढ़ जाती है तो फिर इस प्रकार का व्यवहार करना संभव न होगा। लोगों को अपनी योग्यता के अनुसार नौकरियां मिलेंगी। इसलिए नहीं कि वे स्त्री हैं या पुरुष। स्पष्ट है यह बात पुरुषों को कुछ अधिक पसंद नहीं आती।

पूंजीवाद भी स्त्रियों के विरुद्ध है। यदि स्त्रियों की चेतना में बदलाव आता है तो वे कम मज़दूरी वाली, कम हुनर की नौकरियां नहीं करेंगी जो अब उनके ही पल्ले पड़ती हैं। पूंजीवादी ताक़तें जो युद्ध, सैक्स, ग़ैर-जरूरी उपयोग पर पनपती हैं नारीवाद को पनपने नहीं देना चाहतीं। वे हर तरीक़े

से नारीवाद का विरोध करती आई हैं और करती रहेंगी। ये ताक़तें ही नारीवाद के बारे में गलत धारणाएं फैलाती हैं।

नया समाज

हमारा यह कहना है कि आने वाले लंबे समय के दौरान नारीवाद स्त्री और पुरुष दोनों के लिए फायदेमंद साबित होगा। नारीवाद हर तरह की गैरबराबरी, दबाव व दमन के खिलाफ है। वह एक बराबरी की व्यवस्था कायम करने के पक्ष में है। यह सही है कि इस व्यवस्था में पुरुषों के गैरवाज़िब अधिकार नहीं होंगे लेकिन अन्य तरीकों से उन्हें भी लाभ होगा। मिसाल के तौर पर यदि परिवार में हर बच्चे को (केवल बेटे को ही नहीं) समान रूप से बढ़ने, विकसित होने के अवसर मिलेंगे तो परिवार में, देश में योग्यता व प्रतिभा का विकास होगा। यदि औरतों को सदा ही दूसरों पर निर्भर, लाचार और असहाय बने रहने को विवश नहीं किया जाए तो परिवार अधिक मज़बूत व आर्थिक रूप से सक्षम होंगे क्योंकि काम करने, कमाने वाले हाथ बढ़ जाएंगे। पुरुषों पर से भी आर्थिक ज़िम्मेदारियों का दबाव कुछ कम होगा।

अधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि वे भी नये समाज में अपनी व्यक्तिगत रुचि और इच्छाओं के अनुसार जी पाएंगे। समाज में सदा मज़बूत बने रहने, मर्दानगी दिखाने और परिवार का पेट पालने जैसे दबाव हट जाएंगे और अवश्य ही बहुत से पुरुष भी चैन की सांस लेंगे।

हमारा विश्वास है कि नारीवाद हमें एक स्पष्ट दिशा दे सकता है। नारीवाद खोज की इस सुरंग के अंत में हमें रोशनी नज़र आती है।

□

अगर हम काम बंद कर दें

अगर आप को कोई आपकी पत्नि के बारे में
पूछे तो आप शायद कहेंगे—
"वो? वो काम नहीं करती"।
पर ज़रा आंखें ठीक से खोलिए और देखिए—

मैं सच में एक गुलाम हूं।
रसोई में
फैक्टरी में
मददगार कोई नहीं।
गंदे बर्तन
झाड़ू
पोचा
यही मेरे चारों ओर खड़े रहते हैं
हर वक्त

सुबह होती है
छोटों के बिलखने
और बड़ों के चिल्लाने से
"मेरे कपड़े धुल गए?"
"मां, मेरा मुंह धुलवा दो"
"जरा, मेरे बाल बना दो"

"मेरी किताब खरीदी थी?"
"पेंसिल! अरे मेरी पेंसिल कहां है?"
"बेटा, यहां आ! अपनी दवा खा ले"

"अरे सुनती हो? खाना तैयार हुआ कि नहीं?"
"इतनी देर हो गई है, मेरा टिफिन कहां है?"
"मेरी कमीज मुचड़ी हुई है
ज़रा जल्दी से इसे इस्त्री कर दो।
हे भगवान! अभी तक मेरे जूते पालिश नहीं हुए
कैसी सुस्त और ढीली औरत है यह!"

आखिर, सब चले गए।
मुझे भी देर हो रही है।
मेरी ट्रेन ज़रूर छूट जाएगी।
झगड़-झगड़ा के किसी तरह बस पर चढ़ी
एक पैर पर खड़ी रही
जैसे चिमगादड़ खंबे से चिपकता है
यह कौन है जो मुझ से सटा जा रहा है
लड़ाई कभी, कहीं खत्म नहीं होती।

और अगर मैं शाम को बाज़ार न जा पाई
तो घर में चूल्हा नहीं जलेगा।

लो, वो आ गया, मेरा मर्द।
हो सकता है,
वो मुझे लताड़ने लग जाए
अनाज की बोरी की तरह
मेरा शरीर धस रहा है
और नहीं सह पा रहा
लेकिन, मैं फिर उठ खड़ी होती हूं।
बार, बार
सफाई करने
कपड़े धोने।
मेरे लिए आराम नहीं।

और फिर पति के साथ
रात की शिफ्ट
और ओवरटाईम
जो रोज़ करना ज़रूरी है।
मेरे आराम के चंद घंटे
रात को हड़पे जाते हैं।

सच
मैं घरेलू फैक्टरी की
एक मशीन हूं
जो बिना रुके, उत्पादन में लगी रहती है।

यह तुम्हारी समझ में कब आएगा
कि औरत
उस कैटेगरी
की मज़दूर है
जो अगर काम करना बंद कर दे
तो पूरी दुनिया का
चक्का जाम हो जाए।

(आठ मार्च पर श्रीलंका मे विमेन्स एजूकेशन एण्ड ट्रेनिंग इन्स्टीट्यूट ने यह कविता छापी थी। अनुवाद **कमला धसीन** ने किया।)

आओ बहनों हम मिलकर गाएं
हम नूतन मानव के सर्जन की कथा सुनाएं
हम नई चेतना लाएं
जहां समानता, न्याय और मानवता हो
जहां नारी पर पुरुष का एकाधिकार न हो
हम ऐसा समाज बनाएं

विभूति पटेल

संगठनः क्यों और कैसे?

एक बड़ी पुरानी कहानी है। एक किसान के चार बेटे थे। सब अपनी-अपनी मर्जी के मालिक। किसान के पास थोड़ी सी ज़मीन थी। उसका बुढ़ापा आया। उसने सोचा मेरे मरने के बाद तो ये लड़के आपस में लड़ मरेंगे। थोड़ी सी जमीन के छोटे-छोटे टुकड़े हो जाएंगे। इनमें से किसी का पेट नहीं भरेगा। उसका अंत समय पास आया तो चारों बेटों को बुलाया। किसान ने कहा कुछ लकड़ियां ले आओ। सब बेटों को एक-एक लकड़ी देकर कहा—इसे तोड़ो। हर लड़के ने चटाचट लकड़ी तोड़ दी। किसान ने कहा सब लकड़ियों का गट्ठर बांध दो। अब इसे तोड़ो। सब बेटों ने बारी-बारी ताक़त आजमाई। कोई उस गट्ठर को न तोड़ पाया। किसान ने कहा—"बेटा मिल कर नहीं रहोगे तो अकेली लकड़ी की तरह टूट जाओगे। संगठन में ताक़त है।"

कहानी भले ही पुरानी हो। उसकी सीख आज भी सौ पैसे सच है। इतिहास बताता है कि हर दबे हुए वर्ग ने संगठन का सहारा लिया है। चाहे वह गरीब मजदूर हों या भूमिहीन किसान हों। जिन लोगों के पास अपनी कोई ताक़त नहीं। यानि पैसे की ताक़त, सत्ता की ताक़त, रुतबे या पद की ताक़त। ऐसे लोग आपस में मिल कर गिनती की ताक़त बनाते हैं।

एक और एक ग्यारह

यह बात गणित के हिसाब से ठीक नहीं है। संगठन के हिसाब से ठीक है। हम जानती हैं कि समाज में औरत की अपनी कोई ताक़त नहीं है। वह थोड़ी बहुत ताक़त मर्द से पाती है। मर्द उसका शोषक भी है। अगर अपनी ताक़त चाहिए तो पहले बहुत सी ताक़तहीन औरतें मिल कर गिनती की ताक़त पैदा करें। फिर उसके ज़रिए अपने अंदर ताक़त पैदा करनी है। ताकि आगे चल कर अपने बलबूते पर जिंदा रह सकें।

संगठन से ताक़त तो मिलती ही है। उसके अलावा और भी कई फायदे हैं।

1. संगठन के द्वारा ऐसे उद्देश्य पाए जा सकते हैं जो एक अकेली औरत के बस के नहीं।
2. संगठन के द्वारा कितने ही हाथ, कितने ही दिमाग और विचार मिल कर काम करते हैं।
3. संगठन के काम में निरंतरता होती है। अगर एक दो साथी चली भी जाएं तो काम चलता रहता है। नई साथिनें आ जाती हैं।

संगठन बने कैसे?

संगठन बनने की अपनी एक प्रक्रिया है। कभी-कभी उसके लिए बाहरी मदद ली जा सकती है। पर पहले अपनी इच्छा होनी ज़रूरी है। अगर संगठन बनाने की इच्छा और उद्देश्य वहां की धरती से नहीं जन्मे हैं तो वह पेड़ फल-फूल नहीं सकता।

औरतें सदा से आपस में मिल कर काम करती आई हैं। चाहे पनघट पर पानी भरना हो, जंगल में लकड़ी-चारा लेने जाना हो या अपने आंगन में बैठ कर धान साफ करना हो, पापड़-बड़ियां बनानी हों। हमारे यहां आपस में एक दूसरे की मदद करने की परंपरा है।

इसी तरह संगठन भी एक साथ मिल कर काम करना ही है। इस संगठन का उद्देश्य आर्थिक, सामाजिक या राजनैतिक कुछ भी हो सकता है। उद्देश्य निर्भर करता है उन औरतों की अपनी ज़रूरतों पर।

मिसाल के लिए किसी गांव में औरतें मिल कर शहर में सब्जी या जलावन की लकड़ी बेचने का काम करना चाहती हैं ताकि उन्हें थोक दुकानदार से अच्छे दाम मिलें। या वे ठेकेदार से मजदूरी बढ़वाने या गांव में हैंडपम्प लगवाने के लिए संगठित होना चाहें। या गांव की बहू-बेटी के अत्याचार के खिलाफ कुछ कदम उठाना चाहें।

उद्देश्य : सबसे पहले उन्हें अपने संगठन के उद्देश्य तय करने पड़ेंगे। एक बार जब उद्देश्यों के बारे में सभी साथिनें एकमत हो जाएंगी तब अगला कदम होगा तरीके तय करना।

रणनीति : अपना उद्देश्य पाने के लिए वे क्या तरीके अपनाना चाहती हैं। उसके लिए एक कार्यक्रम बनाना होगा। कुछ समय निश्चित करना होगा और जिम्मेदारी का बंटवारा भी किया जाएगा। यह सब तय हो जाने पर हम कह सकती हैं कि संगठन बन गया है। यह एक अनौपचारिक संगठन रहेगा। आगे चल कर अगर सदस्याएं चाहें तो इसे रजिस्टर भी कराया जा सकता है।

सहयोग : संगठन का एक ज़रूरी मुद्दा है आपसी सहयोग। संगठन में रह कर न सिर्फ अपनी योग्यता और ताक़त की पहचान होती है बल्कि दूसरों की भी। उनकी योग्यता की कद्र करते हुए मिल कर काम करना ज़रूरी होता है। संगठन और ज्यादातर लोगों की भलाई के लिए कभी-कभी अपने छोटे हित को छोड़ना भी पड़ता है। तभी संगठन सफल हो सकता है। □

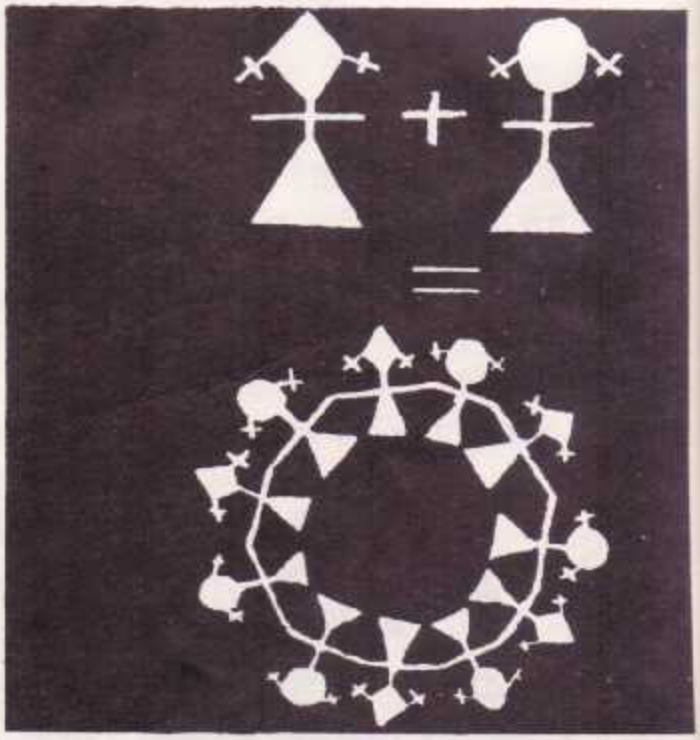

साभार—काली फॉर वीमेन

वीणा शिवपुरी

(रामलाल और कमला दोनो दिहाड़ी मज़दूर हैं। उनके साथ रामलाल की बूढ़ी मां रहती है। रामलाल और कमला के तीन बच्चे हैं। दो बेटियां और एक बेटा। बड़ी बेटी मुन्नी कई दिनों से बीमार है।)

कमला—मां, मुन्नी जाग गई है। रात का एक कटोरी दूध बचा है। मुन्नी को दे दे। हम सब काली चाय पी लेंगे।

मां—कौन सा दूध? रात का दूध तो मैंने बिटवा को पिला दिया। फिर लड़की जात को दूध की क्या ज़रूरत? ज़रा लगाम खींच कर रख।

कमला—ला फिर चाय ही दे दे। बेचारी चार दिन से भट्टी सी तप रही है। मां, इसकी मास्टरनी जी से कह दीजो। अभी दो-चार दिन पढ़ने ना आ सकेगी।

मां—बस, बस, बहुत हुआ कमला। अब इसकी पढ़ाई लिखाई बंद करा दे। इत्ती बड़ी हो गई। घर का कामकाज संभाले।

कमला—बेचारी पढ़ाई के साथ रोटी-पानी भी तो करती है। चार अक्षर पढ़ लेगी तो जून सुधर जाएगी।

(रामलाल अंदर आता है)

रामलाल—कमला, कल की मजूरी के पैसे दे तो। मैं बिटवा को मेला दिखाने ले जा रहा हूं। फिर तू भी काम पे जा। इस छोरी के साथ टैम बरबाद तो कर मती।

कमला—कल के तो बस पांच रुपए बचे हैं। वो मुन्नी की दवाई की खातिर रखे हैं।

रामलाल—पागल हुई है क्या? पांच रुपए डाकदर को दे देगी? कोई ज़रूरत ना है। चार दिन में आप ही ठीक हो जाएगी।

कमला—चार दिन तो पहले हो चुके हैं, इसकी हालत तो और बिगड़ रही है।

रामलाल—*(चिल्ला कर)* बिगड़ रही है तो बिगड़ने दे। भाग में है तो वैद जी की पुड़िया से चंगी हो जाएगी। नहीं हुई तो भी ठीक। खुद भी पार लगेगी और हमारा बोझ भी कम होगा।

मां—अरी लड़कियां तो घूरे पे ही पल जावे हैं। उन्हें कोई दवा दारू नहीं चाहिए।

कमला—अच्छा, कम से कम वैदजी की पुड़िया तो ला दो।

रामलाल—तू ले आना। मेरे पास टैम नहीं

है। चल और खोटी मत कर। पांच रुपए निकाल और काम पे जा। नहीं तो दूंगा दो हाथ।

(कमला दुखी मन से पल्ले में बंधे रुपए खोल कर रामलाल को दे देती है)

सवाल

1. क्या लड़कियों के साथ आमतौर पर ऐसा बरताव होता है या सिर्फ किसी-किसी घर में?
2. किन-किन बातों से मुन्नी और कमला के गिरे हुए दर्जे के बारे में पता लगता है?
3. घर में कमाई करने वाले कौन-कौन हैं?
4. घर में फैसले लेने की ताक़त किसके पास है?
5. मुन्नी बड़ी हो कर मां जैसी बनेगी या बाप जैसी? क्यों?
6. रामलाल और मां की ताक़त किस चीज की है—
   शरीर की
   कमाई की
   सामाजिक व्यवस्था की?

सामाजिक व्यवस्था

इस घर में कमला भी बराबर कमाई करती है। वह मां से ज्यादा जवान और तगड़ी है फिर भी घर में ताक़त रामलाल और मां के हाथ में है। यह ताक़त शरीर या कमाई की नहीं, बल्कि इन दोनों की ताक़त को इस्तेमाल करने के हक़ की है।

कमला शरीर से तगड़ी है लेकिन मारने का हक़ रामलाल और मां को है।

कमला कमाती है पर उसे खर्च करने का हक़ रामलाल को है।

कमला बच्चे पैदा करती है लेकिन उन्हें खाना और इलाज मिले या नहीं, यह तय करने का हक़ रामलाल और मां को है।

परिवार और समाज के ऐसे ढर्रे को पितृसत्तात्मक व्यवस्था कहते हैं। जिस व्यवस्था में घर, जमीन, जायदाद और कमाई का मालिक घर का मर्द हो। पूरे परिवार के बड़े फैसले भी वही करता हो। सबको उसकी मर्जी के हिसाब से चलना पड़ता हो। घर के कायदे कानून भी वही बनाता हो। वंश का नाम उसके नाम से चलता हो। जिस व्यवस्था में पितृ यानि पिता के हाथ में सत्ता या ताक़त हो।

कभी-कभी पुरुष के जरिए कुछ ताक़त औरत को भी मिल जाती है जैसे रामलाल की मां को मिली।

अगर रामलाल न चाहे तो मां के पास कोई ताक़त न रहे। पितृसत्ता के तहत औरत के पास अपनी कोई ताक़त नहीं है। इसी कारण कई बार औरत खुद औरत के रास्ते की अड़चन बनती है। जैसे मां नहीं चाहती कि मुन्नी को दूध मिले या वह पढ़ने जाए। वह बिटवा को खुश करना ज्यादा अच्छा समझती है। बड़े होकर रामलाल की ताक़त बिटवा को ही मिलेगी।

इसी व्यवस्था की वजह से लड़कियों को शिक्षा नहीं मिलती। पूरा खाना और देखभाल नहीं मिलती। अनपढ़, बीमार और कमजोर औरत अपने हक़ की लड़ाई भी नहीं लड़ पाती।

□

चमत्कारी बाबाओं के जाल में न फंसें

सुहास कुमार

राधा—चल रेखा, तुझे अग्नि बाबा के पास ले चलती हूं। सुना है बड़े पहुंचे हुए बाबा हैं। सबकी मनोकामनाएं पूरी करते हैं।

रेखा—नहीं, राधा काकी, मुझे इन सब में ज़्यादा विश्वास नहीं है। भगवान चाहेगा तो आगे पीछे बच्चा हो ही जाएगा।

फिर भी सास जी के ज़ोर डालने पर रेखा राधा काकी के साथ बाबा के दर्शन को गई। बाबा गांव की सीमा पर ठहरे थे। वह उस गांव में केवल चार दिन ठहरने वाले थे। रेखा और राधा काकी करीब 3 बजे दोपहर को वहां पहुंचीं। लोगों की भीड़ लगी हुई थी। स्त्रियों की संख्या बहुत ज़्यादा थी। जब लगभग 50-60 लोग वहां जमा हो गए तो बाबा लगभग नंगे बदन अपनी कोठरी से बाहर निकले। उनके चेले ने उन्हें एक मशाल जला कर पकड़ा दी। बाबा ने जलती मशाल अपने पूरे बदन पर फेरी। लोग आश्चर्य और श्रद्धा से भर गए। सबने अग्नि बाबा की जय बोली।

बाबा ने कहा—"सब अपनी-अपनी इच्छा मन में सोच लो। मेरे आशीर्वाद से वह ज़रूर पूरी होगी। तुम लोगों ने प्रह्लाद की कहानी सुनी है। भगवान का कितना बड़ा भक्त था। पिता की आज्ञा से अपनी बुआ होलिका की गोद में जलती आग में बैठ गया। बुआ तो जल गई मगर वह बच गया। वही शक्तियां मेरे पास भी हैं।"

बाबा का भाषण सबने सुना, फिर सबने उन्हें दक्षिणा दी। रेखा भी उनका आशीर्वाद लेकर

वापस आ गई। एक साल बीत गया। रेखा फिर भी मां नहीं बनी।

बाबा अग्निदेव का रहस्य

यह बाबा उड़ीसा के रहने वाले थे। सन् '66 में बहुत लोकप्रिय हुए थे। अग्नि स्नान का चमत्कार दिखाकर लोगों को ठगते थे। प्रोफेसर बी. प्रेमानंद ने इनका भांडा फोड़ा था। बाबा को जेल हो गई। उनकी संपत्ति का एक ट्रस्ट बना दिया गया।

चमत्कार के पीछे तरकीब : अल्यूमिनियम या किसी धातु के डंडे या मोटे तार पर कस कर सूती कपड़ा लपेटा जाता है। लकड़ी के डंडे पर आग लग सकती है इसलिए उसे नहीं इस्तेमाल किया जाता। नाइलोन का कपड़ा भी नहीं इस्तेमाल करना चाहिए। उसके जलने से तरल पदार्थ निकलता है जिससे बदन जल सकता है। कपड़े को अच्छी तरह मिट्टी के तेल में डुबाया जाता है। सारा फालतू तेल निचोड़कर निकाल दिया जाता है। मशाल को जलाकर शरीर पर इस तरह फेरते हैं कि लपट किसी भी जगह 3 सेकंड से ज़्यादा न टिके। इससे शरीर जलता नहीं है।

हमारे शरीर में 3 सेकंड तक 1200 डिग्री तापमान सह सकने की ताक़त है। दिमाग तक कोई भी संवेदना पहुंचने में 3 सेकंड का समय कम से कम लगता है। यह खाने-पीने की संवेदना के बारे में भी लागू होता है। जीभ पर मीठी, खट्टी, नमकीन, कड़वी चीज़ का स्वाद महसूस करने के लिए उसे कम से कम 3 सेकंड हमारी जीभ पर रहना चाहिए।

अन्य चमत्कार

स्वर्ग से अमृत जल : चमत्कारी बाबा तरह-तरह के चमत्कार दिखाकर भोले और अनजान लोगों को ठगते हैं। एक तांत्रिक ने एक बूढ़े व्यक्ति की मौत पर उसके बेटे से हज़ारों रुपए ऐंठ लिए। किसलिए? वह उनके लिए स्वर्ग से देवी का प्रसाद और अमृत जल लाने वाले थे। बाद में जब उनका भांडा फूटा तो पता चला कि जग की खास तरह की बनावट की तरकीब से वह स्वर्ग से पानी लाने का करतब दिखाते थे।

त्रिशूल का करतब : जीभ में बिना चोट लगे और खून बहे त्रिशूल चुभाने का करतब भी उसकी खास तरह की बनावट पर आधारित है। त्रिशूल की डंडी के बीच में एक फंदा सा रहता है जिसे जीभ में फंस जाने से लगता है कि वह जीभ के आर-पार हो गया है।

मन पसंद मिठाई : इसी तरह कागज के टुकड़े पर लिखे मिठाई के नाम से उस खास मिठाई का स्वाद अनुभव कराना भी एक तरकीब ही है। उंगलियों में पहले से सैक्रीन का थोड़ा सा घोल लगा लेते हैं। जब रसगुल्ला लिखा कागज वह हाथ में पकड़कर वापस लौटते हैं तो मिठास तो उसमें वैसे ही आ जाती है। रहा रसगुल्ले का स्वाद तो वह चूंकि हम उसे ही याद कर रहे होते हैं मुंह में आ जाता है।

मनपसंद खुशबू : नागपुर में एक फकीर बाबा थे। कई तरह के चमत्कार दिखाकर लोगों को ठगा करते थे। बाद में उनकी पोल खुली। वह बासमती चावल की खुशबू, मनपसंद साबुन की खुशबुएं कागज पर लिखे नाम से उन्हें महसूस करा देते थे। इसमें भी उंगलियों में हल्की सी खुशबू लगा ली जाती है। जब वह कागज हाथ में पकड़ा जाता है तो वह खुशबू कागज में आ जाती है। अब जिस खुशबू के बारे में हम सोच

रहे होते हैं वही खुशबू हमारी नाक महसूस कर लेती है। अक्सर इसके लिए काला जादू खुशबू या 'चार्ली स्प्रे' खुशबू इस्तेमाल की जाती है।

ऊपर लिखी सब तरकीबें खुद आज़मा कर देखी जा सकती हैं।

अंधविश्वास

जब हम बिना सोचे-समझे, सवाल उठाए किसी चीज को मान लेते हैं तो उसे अंधविश्वास का नाम दिया जाएगा। ऐसा भी नहीं है कि पढ़े-लिखे लोग अंधविश्वासी नहीं होते। लेकिन उनका प्रतिशत कम होता है क्योंकि वे सोचते हैं। सवाल उठाते हैं। जहां आत्मविश्वास में कमी होती है अंधविश्वास अपनी जगह बनाता है।

सचमुच के ज्ञानी बाबा जंगलों, पहाड़ों पर रहते हैं। तपस्या करते हैं। लोगों के बीच उन्हें ठगने नहीं आते। यह हमारा अंधविश्वास है कि हम चमत्कारी बाबाओं पर विश्वास करके उनको रुपए-पैसे भेंट चढ़ाते हैं।

अक्सर ये बाबा लोग अपने को परखने नहीं देते हैं। जो परखने नहीं देते वह पाखंडी हैं। जो व्यक्ति परखने की हिम्मत नहीं करता वह अंधविश्वासी है। जो परखना ही नहीं चाहता उसे तो मूर्ख ही कहा जाएगा।

वैज्ञानिक सिद्धांत

न्यूटन नाम का एक लड़का था। एक दिन वह पेड़ के नीचे बैठा था। ऊपर से एक सेब गिरा। वह डरा या भागा नहीं। चारों तरफ कोई उसे दिखाई नहीं दिया। उसने उसे दैवी शक्ति से गिरना भी नहीं माना। वह इसके बारे में सोचता रहा। फिर उसने यह भी देखा कि हर चीज ऊपर से नीचे गिरती है। यही सब सोचते-सोचते उसने विज्ञान का सिद्धांत निकाला। उसे कहते हैं "गुरुत्वाकर्षण"। पृथ्वी के केंद्र में यह आकर्षण शक्ति होती है कि सब चीजें उस ओर खिंचती हैं। इसी को गुरुत्वाकर्षण शक्ति का नाम दिया गया। जो जितनी भारी चीज़ होगी उतनी तेज़ी से जमीन पर गिरेगी। न्यूटन बहुत बड़ा वैज्ञानिक बना। इसी तरह भूत-प्रेत, देवी या भूत का किसी व्यक्ति में प्रवेश कर जाना सब अंधविश्वास है। जब कभी उनके अस्तित्व की चर्चा हो अच्छी तरह जांच पड़ताल करें। असली बात कुछ और ही निकलेगी। □

कहानी न्याय के लिए लड़ाई की

"हम महिलाएं कभी भी किसी बात के लिए लड़ाई नहीं करती हैं, इसलिए हमारे साथ यह होता है। गांव के सभी लोगों को मालूम है कि ठगनी बाई का ससुर अपनी बहू पर गलत नज़र रखता था और इसीलिए उसने ठगनी बाई की हत्या कर दी। हम ज़रूर आवाज़ उठाएंगी, अगर हम आवाज़ नहीं उठाएंगी तो आगे भी हमारे साथ ऐसा अन्याय होता रहेगा।"

कुमारी बाई उर्फ ठगनी बाई का ब्याह 15 साल की उम्र में तोरला गांव के जगदीश साहू, पुत्र टेटकू साहू के साथ हुआ था। यह सन् '90 की बात है। ब्याह के दो महीने बाद गौना हो गया। उसके फौरन बाद ही उसे दहेज के लिए सताया जाने लगा। रेडियो, घड़ी, साईकिल आदि लाने को कहा गया। इसके लिए गाली-गलौज और मारपीट की जाती। ठगनी बाई की एक सहेली ने बताया कि उसका ससुर उस पर बुरी नज़र रखता था और वह इस बात के लिए तैयार नहीं थी।

6 अक्टूबर '91 को टेटकू राम ने खेत पर से अपनी पत्नी को तो घास लेकर घर भेज दिया। फिर अकेलेपन का फायदा उठाकर ठगनी बाई के साथ जबर्दस्ती करनी चाही। वह भागती हुई अपने पति के पास घर आई।

ठगनी बाई के ससुर ने कहा, "तुम्हारी जैसी लड़की मेरे घर में नहीं रह सकती। चलो मैं तुम्हें तुम्हारी बहन के यहां छोड़ आता हूं।" ठगनी बाई तैयार हो गई और अपने पति तथा ससुर के साथ चल दी। लेकिन गांव से बाहर पहुंचने के बाद ससुर ने उसके पति को कहा, "खेत में घास रखा है, तुम घास लेकर घर चले जाओ। मैं बहू को पहुंचा आता हूं।"

सात-आठ दिन के बाद ठगनी बाई का पिता अपनी बड़ी लड़की के यहां से लौट रहा था तो उसकी साईकिल रास्ते में पंक्चर हो गई। वह तोरला रुक गया। वहां चुन्नीलाल ने उसे बताया कि उसकी छोटी लड़की तो आठ दिन पहले भाग गई थी। घर पहुंची या नहीं? तब मेहतरु, ठगनी का पिता उसकी ससुराल पहुंचा, वहां सिर्फ जगदीश था। उसने कहा उसके पिता बताएंगे कि ठगनी कहां है?

दूसरे दिन मेहतरु 40-50 लोगों के साथ वापस तोरला आया। तभी पुलिस वाले भी वहां पहुंचे। भीगी खाट पर एक लाश मिली थी। टेटकू राम भी वहां गया मगर उसने लाश पहचानने से इंकार कर दिया। जगदीश ने साड़ी और चूड़ी पहचान कर बताया कि लाश उसकी पत्नी ठगनी बाई की है। मेहतरु ने भी उन चीज़ों को पहचाना। उसी ने बेटी के लिए खरीदी थीं।

महिला पंचायत

ठगनी बाई के मामले में पंचायत की ज़रूरत हुई क्योंकि :—

1. ठगनी बाई को दहेज के लिए सताया जाता था। उसके भाई-बहन, पिता आदि सबने यह बताया।
2. 6 अक्टूबर '91 के हत्याकांड के बारे में शुरू में गांव वालों द्वारा कुछ भी बताने से इंकार करना। सब कुछ जानते हुए भी आवाज़ न उठाना।
3. पुलिस ने लाश का ठीक से पोस्टमार्टम नहीं कराया और लाश को लावारिस घोषित कर अंतिम दाह संस्कार कर दिया।
4. ठगनी बाई की उम्र सिर्फ 17 साल की थी और शादी के 2 साल के अंदर उसकी मौत असाधारण तरीके से हुई थी। पुलिस ने उसे आत्महत्या का मामला कहकर टाल दिया था।

पंचायत की बैठक में कुछ महिलाएं तोरला गांव की, सुंदरकेरा, परसदा की एक-एक तथा रायपुर की दो महिलाएं बुलाई गईं। इन्होंने गांव के सब लोगों से बातचीत कर जानकारी ली। जांच के दौरान उन्होंने पांच गांवों की महिलाओं, युवकों और पुरुषों से बातचीत की। नवापारा पुलिस चौकी के दरोगा और साहू समाज के प्रतिष्ठित लोगों से भी चर्चा कर जानकारी ली।

20 दिसंबर '91 की रैली एवं आम सभा में सात गांवों की महिलाओं और पुरुषों ने भाग लिया। जुलूस के बाद साहू सदन के पास आम सभा हुई।

गांव के ज़्यादातर लोगों का मानना था— "ठगनी बाई तो मर गई। अब कुछ करने से क्या हासिल होगा।" एक स्थानीय नेता ने इस मामले को दबाने की कोशिश की। लेकिन इसके बावजूद रैली हुई। पहले महिलाएं, फिर पुरुष और युवक भी शामिल हुए।

"टेटकू साहू का सामाजिक बहिष्कार करो" "साहू परिवार का गांव में हुक्का-पानी बंद करो", के नारे लगे।

महिला पंचायत की सिफारिशें

1. टेटकू राम साहू एवं उसके परिवार का सामाजिक बहिष्कार किया जाए।
2. ठगनी बाई के पति जगदीश साहू का दुबारा विवाह न होने दिया जाए।

संगठन की महिलाएं जानतीं हैं कि ठगनी बाई का मामला कानूनन् जुर्म है लेकिन यह एक सामाजिक अपराध भी है। कानून की लंबी व खर्चीली प्रक्रिया नहीं कर सकते तो सामाजिक ज़िम्मेदारी तो निभा सकते हैं। इस तरह के अपराधों से चुप रहकर मुंह नहीं मोड़ सकते।

—पुष्पा मसीह, अजित एक्का, रेणुका एक्का

साभार—आवाज़ औरत की

राधा के मां-बाप ने जैसे ही उसका ब्याह पक्का किया, छोटी-सी बच्ची चिंता में डूब गई। उसके खेल-खिलौनें, किताबें, गुड़िया सब उदास पड़े थे।

राधा की मास्टरनी दीदी ने सुना तो दौड़ी-दौड़ी उसके मां-बाप को समझाने आई। यह कैसा अनर्थ कर रहे हो? कुछ अपना और बिटिया का भला-बुरा भी सोचा है? ज़रा कल्पना करो।

अपनी नन्ही-सी राधा इस उम्र से ही चूल्हे-चक्की के बोझ तले दब जाएगी। उसकी हंसने-खेलने की उम्र रोटियां पकाते-पकाते बीतेगी।

कच्ची उम्र में मां बन कर उसकी सेहत चौपट हो जाएगी। हमारी फूल सी राधा असमय में ही बीमार और बूढ़ी हो जाएगी।

बीमार, कमजोर मां के बच्चे भला सेहतमंद कैसे हो सकते हैं? बच्चों की बीमारियां, खुद की कमजोरी, घर के काम का बोझ सब मिल कर राधा को मौत के कगार पर ला खड़ा करेंगे।

...और फिर कानून की नज़रों में जुर्म। 18 साल से कम उम्र की लड़की और 21 साल से कम उम्र के लड़के की शादी करना जुर्म है।

कानून के तहत मां-बाप, ब्याह कराने वाले संबंधी और पंडित तक को जेल हो सकती है। क्या तुम यह चाहते हो?

मां-बाप की अक्ल में बात बैठी। उन्होंने फैसला किया कि वे राधा को पढ़ाएंगे। उसका ब्याह 18 साल होने पर ही करेंगे।

बाल-विवाह का कलंक मिटाएं

रेनुका पामेचा

आखा तीज (5 मई, '92) को राजस्थान में हर साल की तरह शादियों की धूम रही। छोटे-छोटे बच्चे-बच्चियां ब्याह के बंधन में बांध दिए गए। यह ब्याह उनके लिए क्या मायने रखता है? क्या इन बच्चों को अधिकार नहीं है कि वे बड़े होकर अपने हिसाब से कुछ फैसले करें। पढ़ें, लिखें, दुनिया को अपनी समझ से देखें। हम उनसे उनके सपने देखने तक का अधिकार छीनना चाहते हैं।

बाल-विवाह ग़ैर कानूनी तो है ही यह मानवता और देश के प्रति भी एक जुर्म है। ब्याह को सिर्फ खर्चे से जोड़ना और लड़की को सिर्फ एक जिम्मेदारी, बोझ समझना गलत है। यह भी सोचना गलत है कि शादी का ठप्पा लगने के बाद लड़की सुरक्षित हो जाती है।

यह कहना काफी नहीं है कि शादी के बाद गौना बड़ी उम्र में किया जाता है। विवाह के बाद लड़की की पढ़ाई बंद हो जाती है।

गौना 14-15 साल की उम्र में कर दिया जाता है, ज्यादातर माहवारी शुरू होने के जल्दी ही बाद। लेकिन वह भी कच्ची उम्र है। लड़कियां छोटी उम्र में मां बन जाती हैं। यह जच्चा-बच्चा दोनों की सेहत के लिए खतरनाक है।

लड़का पढ़-लिख कर आगे बढ़ जाता है और वह अनपढ़ पत्नी को छोड़ देता है। यदि किसी कारण पति की मौत हो जाए तो बेचारी लड़की बिना किसी अपराध के विधवा का जीवन बिताती है। यही नहीं, कभी-कभी ससुराल वाले ही उससे

नाजायज यौन-संबंध बना लेते हैं। जब बात खुलती है तो खुद तो कोई जिम्मेदारी लेते नहीं, बेचारी लड़की ही बदनाम होती है। बदनाम क्या, उसकी तो जिंदगी ही तबाह हो जाती है।

समय ने करवट ली है। हमारी सोच में कुछ बदलाव आया है। हमको आज संकल्प लेने की ज़रूरत है कि:

हम लड़के व लड़की में भेद नहीं करेंगे।

दोनों को पढ़ा-लिखा कर उनकी सोच बनने का मौका देंगे।

उनके बालिग, शिक्षित, समझदार व अपने पैरों पर खड़ा हो जाने के बाद ही उनकी शादी करेंगे। कम से कम वे अपने पैरों पर खड़ा होने लायक तो बन जाएं।

राजस्थान की धरती को बाल-विवाह के कलंक से छुटकारा दिलाएंगे। बाल-विवाह करके बच्ची को उसके मानव अधिकारों से वंचित नहीं करेंगे।

पंचायत से लेकर संसद तक हर पदाधिकारी इसके लिए कोशिश करे। यह एक सामाजिक समस्या है लेकिन केवल स्वयंसेवी संस्थाओं द्वारा जागरूकता लाने की कोशिश काफी नहीं है। इसमें सरकारी और कानूनी दबाव भी ज़रूरी है। समाज को बुराइयों से बचाना हम सबका कर्त्तव्य बनता है। इसके लिए हमारा सामाजिक ढांचा दोषी है। मगर सबसे ज़्यादा दोषी वे मां-बाप हैं जो बिना सोचे-विचारे इस प्रथा को चलाए जा रहे हैं। काफी देर हो चुकी है, अब और देर करना हमारे या देश के हित में नहीं है। □

बाल-विवाह रोक अधिनियम

बाल-विवाह की बुराइयों को ध्यान में रखते हुए 1929 में इसके खिलाफ़ कानून बना जिसे शारदा एक्ट के नाम से जाना जाता है।

यदि 18 साल से ऊपर और 21 साल से कम उम्र का लड़का 18 साल से कम उम्र की लड़की से शादी करता है तो उसे 15 दिन की साधारण सज़ा या एक हज़ार रुपए तक जुर्माना या दोनों सजाएं हो सकती हैं। अगर पुरुष की आयु 21 साल से ज्यादा है तो कैद की मियाद तीन महीने तक हो सकती है।

जो व्यक्ति बाल-विवाह कराता है यानि पंडित या बिचौला उसे 3 माह के साधारण कारावास और जुर्माने की सज़ा हो सकती है।

अगर विवाह दो नाबालिगों का है यानि दोनों की उम्र 18 वर्ष से कम है तो उनके माता-पिता, अभिभावक या संरक्षक को 3 माह के साधारण कारावास और जुर्माने की सज़ा दी जा सकती है। इस अपराध के लिए किसी औरत को जेल नहीं होगी

यह काफी ताज्जुब की बात है कि इस अधिनियम में कोई सुधार नहीं किया गया है। अपराधियों के लिए सज़ा बेहद मामूली है और वह भी उन्हें अधिकतर मामलों में नहीं दी जाती है। इसका कोई डर उनके मन में हो ही नहीं सकता।

बाल-विवाह अधिनियम पर कई चर्चाएं हुई हैं। उनसे कुछ सुझाव सामने आए हैं।

शादी के पहले वर और वधू की उम्र का सर्टीफिकेट प्रस्तुत करना ज़रूरी हो कि वे दोनों बालिग हैं।

जन्म-मृत्यु की तरह पंचायत या किसी और दफ्तर में विवाह का पंजीकरण किया जाए।

बाल-विवाह को कानूनी मान्यता न दी जाए।

बाल-विवाह के खिलाफ रपट पड़ौसी या महिला संगठन लिखा सकें।

□

एक सच्ची कहानी

जो पढ़े, वह बढ़े

कृष्णा कुमारी सिंह

सीता देखने में सुंदर थी। जल्दी विवाह हो गया। एक के बाद एक, पांच बच्चों की मां बन गई। खुद दुबली, बीमार, खून की कमी से पीड़ित। कुपोषण के शिकार बीमार, कमज़ोर बच्चे। दुराचारी पति आधी से ज़्यादा कमाई शराब में उड़ा देता। सीता कुछ कहती तो गाली-गलौज के साथ पिटती भी।

तंग आकर दो चार घरों में बर्तनों की सफाई आदि का काम पकड़ लिया। गुज़ारा चलने लगा। पति को पता चला, उसका काम छुड़वा दिया। वह हमारे ही मुहल्ले में रहती थी। थोड़ा बहुत जानती थी। एक दिन मैं उसके घर के सामने से गुजर रही थी। रोने की आवाज सुन कर रहा नहीं गया। अंदर जाकर देखा तो मैं सकते में आ गई। फटे कपड़े, बेतरतीब बाल, शरीर पर मार के निशान।

मैंने उसके लिए चाय मंगाई। हम दोनों ने चाय पी। सहानुभूति पाकर उसने सारी बातें खुल कर बताईं। मैंने उसको अपने यहां काम करने के लिए बुलाया। डरते सहमते वह आने लगी। महीने में 10 दिन भी आती तो भी मैं कुछ नहीं कहती। मैं उसे पढ़ना-लिखना सिखाने लगी। मेरा स्नेह व बढ़ावा पाकर वह पढ़ना सीखने लगी। जल्दी ही वह अपना नाम और कुछ शब्द लिखना सीख गई।

अब धीरे-धीरे उसमें कुछ हिम्मत आ रही थी। उसने मुझसे कहा कि वह घर पर ही कोई धंधा शुरू करना चाहती है। एक दिन एक आदमी चार मुर्गियां बेचने आया। सीता काम करने आई हुई थी।

मैंने उससे पूछा—"तू इन्हें पालकर अंडे बेचने का काम करेगी।" सीता ने उत्साह दिखाया। मैंने उन्हें खरीदकर सीता को दे दिया। सीता अंडे बेचने का काम करने लगी। कुछ अंडों के चूजों से मुर्गियां पालती। उसका धंधा चल निकला।

होली के दिन बहुत खुश-खुश मेरे पास आई। इधर एक महीने से मेरे यहां उसकी बेटी काम पर आने लगी। वह खुद मुर्गियों का धंधा संभालने में लगी थी। उस दिन उसका पति रघुवा भी उसके साथ था। उन लोगों ने बताया कि बैंक से कर्ज़ लेने की अर्जी दे दी है और उन्हें पूरी उम्मीद है कि वह उन्हें मिल जाएगा। वह थोड़ा और बड़े पैमाने पर अंडे और मुर्गी का व्यापार शुरू करेंगें।

"क्यों सीता, अब तो तेरा पति तुझे नहीं पीटता।"

"नहीं दीदी, इसको पता है कि अगर अब मुझे पीटेगा तो मैं नाका जाकर रपट लिखा दूंगी। और दरोगा जी इसकी पिटाई करेंगें। अब तो यह काम में मदद भी करता है। मुझे तो वह गीत याद आ रहा है—

दुख के दिन बीते रे भैया
सुख के दिन आयो री
रंग जीवन में नया आयो री

"दीदी आपका एहसान नहीं भूल सकती। जो इस अबला को सबला बनाया। आप ही के कारण मैंने अपने को पहचानना सीखा। पढ़ना-लिखना सिखाकर आपने नई दिशा दिखाई।" □

हर औरत का सपना घर हो उसका अपना

वीणा शिवपुरी

आपबीती—एक

अनिता बड़े धनी घर की बेटी थी। उतने ही धनी घर में ब्याही गई। मां-बाप ने दान-दहेज देने में कोई कसर न छोड़ी। सोचा होगा दान-दहेज से बेटी के लिए खुशियां खरीद लेंगे। धनी ससुराल में बेटी राज करेगी। हुआ बिलकुल उलट। पहले ही दिन से अनिता का पति और सास उससे नाराज थे। कभी उसके मामूली रूप-रंग का ताना, कभी उसके उठने-बैठने पर नाराज़।

पति धनी घर का लाड़ला बेटा था। उसकी शामें दोस्तों के साथ शराब पीने में बीततीं और रातें कहीं और। आधी-आधी रात गए घर लौटता। अगर अनिता कुछ पूछती तो उसके साथ मार पिटाई करता। वह सास के सामने दुखड़ा रोती तो वह भी बेटे का ही साथ देती। अनिता रोते-रोते आधी हो गई। उसने हर तरह से अपनी ससुराल वालों को खुश करने की कोशिश की। जैसा वे कहते वैसा ही करती, फिर भी वे लोग नाराज़ रहते।

एक साल बीत गया। आखिरकार वह थक गई। उसने मां-बाप से कहा—"आप मुझे यहां से ले जाओ। यहां मैं घुट-घुट के मर जाऊंगी। आपके पास किसी चीज़ की कमी नहीं। फिर मैं भी पढ़ी-लिखी हूं। सिर्फ मुझे आपका सहारा चाहिए।"

मां-बाप ने कहा—"ना बेटी। ब्याही बेटी की जगह ससुराल में होती है। दुनिया क्या कहेगी? बिरादरी थूकेगी। खानदान की इज्जत मिट्टी में मिल जाएगी। तुझे जिंदगी वहीं काटनी है।"

आपबीती—दो

बबली गरीब घर की लड़की थी। घरों में झाड़ू-पोचे का काम करती और मज़े से रहती।

मां-बाप ने उसकी शादी कर दी। जब तक गौना नहीं हुआ था तब तक ठीक था। जैसे ही वह गौने के बाद ससुराल गई उसकी जिंदगी हराम हो गई। पति जो कुछ कमाता शराब और जुए में उड़ा देता। बात-बात में मारपीट करता।

बबली अभी कच्ची उम्र की थी। शारीरिक संबंधों को लेकर भी पति से झगड़ा हो जाता। वह रात-दिन की मारपीट और झगड़ों से तंग आ गई। एक दिन वो चुपके से भाग कर मायके आ गई। उसने मां से कहा—"मैं दो-चार घरों का काम पकड़ लूंगी। अपने पेट लायक कमा सकती हूं। तुम पर बोझ नहीं बनूंगी। मुझे ससुराल मत भेजो।" चार छः दिन बाद पति लिवाने आ गया।

मां ने कहा—"बबली औरत की ससुराल से अर्थी ही निकलती है। शादी के बाद हमारे घर में तेरे लिए कोई जगह नहीं।"

बबली खूब रोई-धोई। किसी का दिल नहीं पसीजा। मां-बाप ने जबरदस्ती पकड़ कर उसे ससुराल पहुंचा दिया। उसी नरक में जहां उसे रात-दिन लातें, घूंसे और गालियां मिलतीं। जहां कोई प्यार के दो बोल बोलने वाला न था।

आपबीती—तीन

लता शादी होने के पहले से ही बैंक में नौकरी करती थी। शादी के बाद भी उसने नौकरी नहीं छोड़ी। पति भी खुश था। दो-ढाई हजार रुपए घर लाती थी। एक लड़की हो गई। पति और सास का मुंह चढ़ गया। अब सबको लता में नुक्स नजर आने लगे।

सास कहती—"मैं घर का काम करूं। इस लड़की को भी संभालू और बहू सारा दिन दफ्तर में मौज करे।"

पति कहता—"तुम पैसे फिजूल खर्च करती हो। सारी तनखा मेरे हाथ में दिया करो।"

इसी बीच लता ने दूसरी बेटी को जन्म दिया। अब तो ससुराल वालों ने उसकी नाक में दम कर दिया। रोज़-रोज़ घर में झगड़े होते। लता तनाव में घिरी रहती। दफ्तर के काम में भी गड़बड़ी हो जाती। तंग आकर उसने फैसला किया कि वह तलाक ले लेगी।

मां ने सुनते ही कानों पर हाथ धर लिए। भाइयों ने कहा—"तुम पागल हो। झगड़े किस घर में नहीं होते। तुम्हें सहना चाहिए। चार पैसे कमाती हो तो सिर चढ़ गया है। औरत को झुक कर रहना चाहिए। हम तुम्हें नहीं रख सकते। हमें अपनी बेटियां भी तो ब्याहनी हैं।"

मां बोली—"अब तो घर के मालिक बेटे हैं। मैं बिना उनकी मर्जी के क्या कर सकती हूं।"

लता ने अलग घर किराए पर ले लिया और अपनी बेटियों के साथ रहने लगी। पास-पड़ौस में कानाफूसी होने लगी। औरतें देख कर मुंह फेर लेतीं। मर्द मुस्कुराते। रात गए कोई दरवाजा खटकाता तो कभी खिड़की पर कंकर बजते। लता बेटियों को छाती से चिपकाए जागती रहती। लता को छः महीने में चार बार मकान बदलना पड़ा।

बेघरबार औरत

मां-बाप के सहारा देने से इंकार करने के बाद एक दिन अनिता ने साड़ी का फंदा लगा कर आत्महत्या कर ली।

मां-बाप ने जबरदस्ती बबली को ससुराल भेज दिया। एक दिन मौका पाकर वो वहां से फिर भाग गई। आज किसी को नहीं मालूम कि बबली कहां है?

लता को भाइयों ने सहारा नहीं दिया। समाज ने उसे अकेली जीने न दिया। वो हार थक कर फिर ससुराल लौट गई। जहां वह हर रोज़ मर-मर कर जीती है।

ये औरतें जाएं तो जाएं कहां?

आज हज़ारों लड़कियां या तो फंदा लगा कर दुखों से छुटकारा पाने की कोशिश कर रही हैं, या फिर घर से भाग कर किसी कोठे पर पहुंच गई हैं। बहुत सी अपनी किस्मत को कोसती हुई कुढ़-कुढ़ कर जीती हैं।

क्या इनके लिए इतनी बड़ी दुनिया में कोई जगह ऐसी नहीं जहां वे सुरक्षा और सम्मान के साथ जी सकें। मां-बाप के घर में उसे जन्म से पराई समझा जाता है। ससुराल के घर का मालिक पति होता है। ससुराल में भी उसके लिए तभी तक जगह होती है जब तक वह उनकी जी-हजूरी करती रहे। समाज या सरकार ने ऐसी कोई जगह बनाई नहीं जहां अकेली औरतें रह सकें।

सवाल यह उठता है कि शादी होते ही लड़की का मां-बाप के घर रहने का हक़ क्यों छिन जाता है? घर के मालिक भाई क्यों बन जाते हैं?

कुछ अनजान लोगों के साथ विदा करके उसे निराधार क्यों छोड़ दिया जाता है? औरतें देश की जनसंख्या की आधी हैं। समाज, देश की तरक्की में पूरा हाथ बंटाती हैं। फिर उनके सिर पर छत क्यों नहीं? कोई ऐसा घर क्यों नहीं जहां वे अपने हक़ से रह सकें। केरल (दक्षिण भारत) की औरत के पास अधिकार है कि वह जब कभी चाहे अपनी मां के घर में जाकर रह सकती है। वहां उसका हिस्सा है, उसका हक़ है। क्या देश की लाखों औरतों को भी यह हक़ नहीं मिलना चाहिए? □

खड़ंजे का ठेका औरतों ने लिया

हम दावा तो नहीं करते कि महिलाएं वही सब काम कर सकती हैं जो पुरुष करते हैं। हां, यह ज़रूर कह सकते हैं कि पुरुष वह काम कभी नहीं कर सकते जो महिलाएं करती हैं। मसलन बच्चे पैदा करना। यही बराबरी की बात ज़रा फीकी पड़ जाती है। महिलाएं शराब पीना भी पसंद नहीं करतीं। आज हम एक ऐसे क्षेत्र की बात बताएंगे जो अभी तक पुरुषों का क्षेत्र ही माना जाता था।

जखौली क्षेत्र के मखौत गांव में जवाहर रोज़गार योजना के आने पर सबसे पहले महिलाएं प्रधान जी के पास पहुंचीं। फिर आपस में एक बैठक की। खूब विचार विमर्श हुआ। सामूहिक फैसला हुआ कि इस बार जवाहर रोज़गार योजना का ठेका महिलाएं लेंगी।

कुल ठेका 6000 रु० का था। गांव की चकोरी देवी ने ठेका लिया। भगवान देई ने सहायता की। काम रास्ते में खड़ंजा बिछाने का था। आपस में बात करके मजूरी 21 रु० रोज़ तय की गई। अब सवाल उठा पुश्ता कौन लगाएगा। उन सबने मिलकर एक पुरुष से बात की। उसकी मज़दूरी भी 21 रु० तय की गई। कुल 15 महिलाओं ने काम किया। काम पूरा होने के बाद 600 रु० की बचत भी हुई। वह पैसा महिला-मंगल दल के कोष में जमा किया गया। उन रुपयों को महिलाएं किस काम में लगाएंगी अभी तय नहीं हुआ है। कुछ भी हो महिलाओं का उत्साह बहुत बढ़ा है। गांव के पुरुष देखते ही रह गए।

—गीता गैरौला, टिहरी

पक्का हो इरादा, सफलता मिलेगी ज़रूर

कान्ता मारवा

अजमेर दरगाह के पास अंदरकोट के ठेठ अंदर एक कॉलोनी है—गरीब नवाज़ कॉलौनी। थोड़ी ऊंचाई पर है, पच्चीस-तीस घरों की यह बस्ती। कुछ पक्के मकान हैं, तो कुछ झोंपड़-पट्टियां भी। बाहर से कुछ लोग गरीब नवाज़ के नज़दीक आकर बस गए और कुछ अंदरकोट के बाशिंदों ने ऊपर पहाड़ी पर अपने मकान बना लिए हैं। वहां एक छोटे-से मकान में रहती हैं सत्रह वर्षीय जानू बेगम। इस साल (1992) दसवीं का इम्तहान देने की तैयारी कर रही है।

जानू को आज भी याद है जब वह छः वर्ष पहले असम से अपने अब्बू और दूसरी अम्मी को छोड़कर, अपनी अम्मी, बड़ी बहन और तीन भाइयों के साथ अजमेर आई थी। उसने सुना था कि अंदरकोट में नीलोफर और फरूख कोई पढ़ने-पढ़ाने के अनौपचारिक केंद्र चलाती हैं। उसमें वे लड़कियां पढ़ने जाती हैं, जिन्हें किन्हीं कारणों से स्कूल नहीं जाने दिया जाता। जानू कहती हैं कि वह कई बार उस केंद्र को चुपके-चुपके देख आई थीं और बराबर सोचती रहती थीं कि वह अम्मी को समझा-बुझा कर दो घंटे के लिए वहां पढ़ने का जुगाड़ कैसे बैठाए? जब अम्मी से बात छेड़ती, अम्मी तीखी आवाज़ में यही कहती—

"तेरी बड़ी बहन पढ़ी है क्या जो तू पढ़ेगी? मैं खुद कहां पढ़ी-लिखी हूं। हम औरतों को घर का काम-काज सीखना चाहिए यही हमारी तालीम है। घर का काम किया कर। मैं नहीं भेजूंगी तुम्हें केंद्र पर।"

उन दिनों की याद ताजा होते ही जानू की बड़ी-बड़ी आंखों में आज भी उदासी के साये मंडराने लगते हैं। किंतु जल्दी ही जज़बात पर काबू पाकर वह थोड़ी तार्किक होकर बोलने लगती है—

"हमारे घर में कोई भी तो पढ़ा-लिखा नहीं। अनवर भाई जो मेटाडोर चलाते हैं, अनपढ़ हैं। अब्बू असम में पान की दुकान करते हैं, वे भी पढ़ने से महरूम रहे। अम्मी तो ठेठ अनपढ़ है। अभी भाभी आई है, उनको भी किसी ने मदरसे नहीं भेजा।"

हिम्मत बटोरी

जानू जानती थी कि अम्मी को इस बात के

लिए मनाना कि वह अपनी बेटी को रोज़ केंद्र पर पढ़ने भेज दे, बहुत मुश्किल था किन्तु उसकी पढ़ने की तमन्ना को दबाना तो और भी मुश्किल था। इसलिए इन स्थितियों से सीधी टक्कर लेने को हिम्मत बटोर ली थी जानू ने। और एक दिन वह केंद्र पर पहुंच गई, और लौटकर घर में ऐलान कर दिया कि वह अब हर रोज पढ़ने जाएगी। अब उसे कोई नहीं रोक सकता। ग्यारह वर्षीय लड़की की ज़िद के सामने मां को घुटने टेकने पड़े। जानू नियमित रूप से केंद्र पर जाने लगी। पढ़ने में उसकी रुचि और सीखने की उसकी चाह को देखकर नीलोफर और फरूख ने उस पर विशेष ध्यान दिया। जानू बेगम ने दो वर्ष बाद पांचवीं और फिर एक वर्ष बाद छठी की परीक्षा स्कूल की लड़कियों के साथ बैठकर दी और बहुत अच्छे अंकों से पास हुई।

छठी की परीक्षा के दौरान जानू खुर्शीद के संपर्क में आई, जो उन दिनों अपर प्राइमरी के केंद्रों को देखती थीं। खुर्शीद ने उसे आगे पढ़ने की खूब प्रेरणा दी और कई बार उसकी अम्मी को भी समझाया कि वह अपनी बेटी की आगे पढ़ने की तमन्ना को न कुचले।

"अम्मी खुर्शीद के सामने तो चुप हो जाती थी किन्तु उसके जाने के बाद मुझ पर गालियों की जो बौछार होती थी बस—" इतना कहकर जानू हंस देती है और बाकी शब्द हंसी में ही समेट कर छिपा लेती है।

जानू आगे बताती है—"छठी के बाद उसी अपर प्रइमरी केंद्र में कुछ लड़कियों को आठवीं की परीक्षा देने के लिए तैयार किया जा रहा था। मैंने एक वर्ष में आठवीं का कोर्स पढ़कर परीक्षा देने का इरादा कर लिया था। किन्तु अम्मी का कहना था कि मैं अब बड़ी हो गई हूं, मुझे घर में ही रहना चाहिए, नहीं तो बिरादरी के लोग बातें बनाएंगे। बिरादरी को इन बातों का जवाब देने की कुव्वत उसमें नहीं है।

"इस तरह मेरी मां का विरोध और मेरी पढ़ाई आपस में टकराते रहे। किंतु खुर्शीद बाजी का सहारा पाकर मेरी पढ़ाई चलती रही और मैंने आठवीं की परीक्षा भी पास कर ली। एक दिन खुर्शीद बाजी से मैंने कहा कि यदि मुझे भी इस प्रकार का एक अनौपचारिक केंद्र चलाने की इज़ाजत मिल जाए तो मैं अपनी बस्ती की लड़कियों और लड़कों को खूब अच्छा पढ़ाने का वादा करती हूं। हालांकि मैं जानती थी कि यह इतना आसान नहीं होगा कि मुझे केंद्र चलाने के लिए अनुदेशिका बना दिया जाए किंतु खुर्शीद बाजी की कोशिशों से यहां भी कामयाबी मिली। मैं पिछले दो सालों से यह अनौपचारिक केंद्र अच्छी तरह से चला रही हूं, जिसका मुझे फ़ख्र है।"

स्कूल में दाखिला

इस तरह जानू को पढ़ने का जो शौक लग गया था, वह रोके नहीं रुका और जानू ने ठान ली कि वह अब दसवीं कक्षा की परीक्षा देगी। पर इसके लिए उसे स्कूल में प्रवेश लेना होगा। यह बहुत बड़ी बाधा थी। वह जानती थी कि इसके लिए अम्मी को राज़ी करना बहुत कठिन होगा, किंतु जानू तो चट्टान भी तोड़ने का इरादा रखती थी। इसलिए उसने खुर्शीद बाजी की सहायता लेकर स्कूल में दाखिला लिया। जानू इसका बखान कुछ भावुक होकर करती है—

"इसके लिए मैंने अम्मी को बहुत मनाया, उस पर गुस्सा भी किया, खाना-पीना भी छोड़ा तब कहीं जाकर अम्मी का विरोध थोड़ा मंद पड़ा।"

किंतु यह कहते-कहते जानू को लगता है जैसे इतने बड़े विरोध को मंद करने का यही कारण इतना वज़नदार नहीं है। इसलिए थोड़ा रुक कर वह फिर अपनी मुस्कान बिखेरती हुई एक और कारण को पुरजोर शब्दों में कहती है—

"मैंने पढ़ाई के साथ-साथ घर का काम करना नहीं छोड़ा। बल्कि घर को पहले से साफ सुंदर बनाया। बिखरा घर संवारा। खाने-पीने में किताबों में पढ़ी बातें जब मैं बोलती और वैसा खाना पकाती तो मां की आंखों में एक अजब सी चमक देखती। शायद, मां भी पढ़ाई के बारे में कुछ अच्छा-अच्छा-सा सोचने लगी थी। मैंने अपनी बड़ी बहन को भी पढ़ाना शुरू कर दिया था। मैंने अपने भाइयों जलाल, बिलाल का भी स्कूल में दाखिला करवाया।"

27 मार्च, 1992 को राजस्थान विश्वविद्यालय का एक दल जानू का अनौपचारिक केंद्र देखने आया। जिस लड़की ने अपने पढ़ने के लिए इतना संघर्ष किया और जो ऐसे ही किसी अनौपचारिक केंद्र पर पढ़कर तैयार हुई हो, वह लड़की कमर कस कर दूसरों को पढ़ाने के लिए ललकार रही है। उसे 100 रु० ईनाम में मिले। जानू बेगम कहती है—

"यह 100 रुपये मेरे बहुत काम आए। हमारी बिजली कट गई थी। अस्थायी कनैक्शन मिला हुआ था—पर हम पैसे नहीं दे पाए थे। अस्सी रुपए देकर फिर से कनैक्शन ले लिया। उस दिन मैंने अम्मी को बहुत ही खुश देखा। वह मेरी बड़ी बहन से मुखातिब होकर कहने लगीं—तुम भी मेरे विरोध के बावजूद और पढ़ लेतीं तो कितना अच्छा होता।"

जानू के चेहरे पर विजय की झलक साफ दिखाई देती है। वह अपना आत्मविश्वास शब्दों में इस तरह ढालती है—

"अम्मी की बातें सुनकर अब मुझे ऐसा लगता है कि उसे यकीन हो गया है कि पढ़ाई इंसान में तबदीली लाती है। मैं भला मौका कहां चूकने वाली हूं। मैंने अपनी अम्मी को भी पढ़ाना शुरू कर दिया है।"

□

पढ़न जाओ बिटिया

तुम्हारे पढ़े से जग सुधरेगो
सांचो तेरो रूप सजेगो
बिन विद्या के झूठो श्रंगार
बिन शिक्षा कोई आदर नाहीं
लोग बोलेंगे तो को गंवार
आंख तीसरी मानो शिक्षा
माता-पिता की यही है इच्छा
बिन शिक्षा जगत अंधियार
बदले युग में हाथ बंटाओ
नारी जीवन जगत आधार
पढ़न जाओ बिटिया
तो होगा सुधार

दौलत सिंह मरौनिया

इनसे प्रेरणा लें

विधवा सास ने विधवा बहू का विवाह किया

बात पाली गांव और सीकर, राजस्थान की है। बात नई दिशा की ओर ले जाने वाले कदम की है। बात पुनर्विवाह की है।

बड़ी धूमधाम से पाली गांव में मंजू का ब्याह फरवरी '91 में हुआ। पति के साथ वह खुश थी लेकिन विधि का विधान। 6 महीने में वह विधवा हो गई। कुछ दिन ससुराल में, कुछ दिन मायके में रह कर उसके दिन कटने लगे।

इधर सीकर में प्रचेता कमला के भांजे विनोद की पत्नी की प्रसव में मृत्यु हो गई। उसके एक 5 साल की बच्ची थी। मंजू का पीहर और प्रचेता कमला का घर नज़दीक ही था। किसी ने मंजू के लिए विनोद के साथ ब्याह का प्रस्ताव रखा। कमला को बात जंची। उसने अपनी बहन और बहनोई से बात चलाई। वे पढ़े-लिखे, समझदार थे। उन्हें कोई एतराज नहीं था। लड़की के मां-बाप से बातचीत की गई। उन्होंने मंजू की सास से बात करने को कहा।

मंजू की विधवा सास स्वयं उस स्थिति से गुजर चुकी थी। समझदार थीं। उन्होंने स्वयं बेटी की तरह सब रस्में अदा कीं। मंजू की डोली वहीं से उठी। शादी काफ़ी सादगी से की गई। सभी लोगों ने इस पुनर्विवाह को सराहा एवं वर-वधू को आशीर्वाद दिया। मंजू अब नई गृहस्थी में सुख से रह रही है।

महेश पुनमिया
सीकर

हिम्मत की एक मिसाल

बंबई के पास एक गांव में कमला का जन्म हुआ आज से 40 साल पहले। पिता बचपन में ही चल बसे। मां ने बहुत छोटी उम्र में उसकी शादी त्रापज गांव में कर दी। उसके 3 बहनें और 4 भाई थे जो बंबई में रहते थे। ससुराल में पति और सास के सिवा कोई नहीं था।

ब्याह के दो साल बाद कमला ने एक बेटी को जन्म दिया। तीसरे साल वह फिर से गर्भवती हुई और उसके पति का देहांत हो गया। सास ने उसे अपसगुनी कहकर घर से निकाल दिया। उसका मायके से लाया सामान भी सब रख लिया।

अकेली, सुंदर गर्भवती स्त्री, उम्र 16-17 वर्ष, कहां जाए। वह मायके वापस गई। मां ने सहारा दिया। लेकिन कितने दिन। कमाना ज़रूरी था। कमला ने भाई से भी मदद की भीख नहीं मांगी।

उसने मन में ठान ली। वह कुछ रोजगार करेगी। बच्चों को पढ़ाएगी लिखाएगी। उसने भैंस खरीदी, गांव में दूध बेचने लगी, मलाई से घी बनाकर बंबई बेचने को भेजती। उसका धंधा चल निकला। और भैंसें खरीदीं। कुछ साल बाद जब बच्चे कुछ बड़े हुए उन्होंने प्राइमरी स्कूल की कक्षाएं पास कर लीं। आगे पढ़ाई के लिए शहर जाना ज़रूरी था। तब भी वह नहीं घबराई।

हिम्मत करके बंबई आई। वहां खास समस्या रहने की जगह की थी। उसके भाई ने उसके रहने का इंतजाम कर दिया। यहां भैंसें पालकर घी का व्यापार नहीं हो सकता था। उसने घर पर साबुन बनाना शुरू किया। घर-घर जाकर उसे बेचती। धीरे-धीरे उसका यह धंधा भी चल निकला।

हिम्मत, लगन, सूझ-बूझ से क्या नहीं किया जा सकता। लड़की को उसने बी.काम. तक शिक्षा दी, फिर उसका ब्याह कर दिया। लड़के को इंजीनियरिंग की शिक्षा दी।

यह एक सच्ची घटना है। उस समय स्त्रियों को घर की चारदीवारी के भीतर ही रहना होता था। घर के बाहर निकलते ही लोग उसे बदनाम करते थे। तरह-तरह से उसे कमज़ोर बनाया जाता था। कमला ने सबला बन कर हालात का सामना किया।

कमला की कहानी हमें सोचने को मजबूर करती है। क्यों लड़कियां और स्त्रियां अन्याय सहन करती हैं? वे हिम्मत से सबला बन कर क्यों नहीं खड़ी होती हैं?

—मृदुला जोशी, चंद्रपुर (महाराष्ट्र)

महिला-पंच श्रीमती भौती

लगभग 46-47 वर्ष पहले श्रीमती भौती का जन्म नदबई तहसील के पीपरऊ गांव में हुआ था। पिता का देहांत बचपन में ही हो गया था। मां ने बड़ी हिम्मत से 8 बेटियों और एक बेटे का लालन-पालन किया। उनके पास 40 बीघा खेत था।

''घर के कामकाज व खेत के काम के कारण हम पढ़-लिख नहीं सकी मगर हममें आत्मविश्वास की कोई कमी नहीं है। यह हमने अपनी मां से विरासत में पाया है'' श्रीमती भौती का कहना है। वह बताती हैं कि उनकी मां ने उन्हें और उनकी अन्य बहनों को कभी खेलने जाने से नहीं रोका।

13 वर्ष की आयु में भौती जी का ब्याह नदबई तहसील के गांव हंतरा के निवासी श्री रतनसिंह फौज़दार के साथ हुआ। पति के यहां भी खेती थी। वह पढ़े-लिखे नहीं थे लेकिन बड़े आजाद ख़्यालात के थे। लड़कियों की शिक्षा के समर्थक थे। 30 वर्ष तक वह पंच रहे। टी.बी. हो जाने के कारण इस्तीफा दे दिया। लेकिन उन्होंने अपनी पत्नी श्रीमती भौती को पंचायत में आने के लिए उत्साहित किया।

पंच बनीं

आज श्रीमती भौती के पति की मृत्यु को तीन साल हो गए हैं। वह साढ़े तीन वर्ष से पंच हैं। वह पंचायत की बैठकों में बिना घूंघट काढ़े बैठती हैं। महिलाओं की समस्याओं पर विचार-विमर्श करती हैं। उनसे दूसरी महिलाओं को हिम्मत व प्रेरणा मिलती है। गांव की सभी महिलाएं उनकी तारीफ करती हैं। श्रीमती भौती के तीन बेटे और एक बेटी है। उनकी बहुओं का कहना है कि उनकी सास उन्हें बेटियों की तरह प्यार करती हैं।

हाल ही में गांव में दुग्ध उत्पादक सहकारी समिति खुली है। वह खुद उसकी सदस्या हैं। अन्य बहनों को भी उससे जोड़ने की कोशिश में लगी हैं। वह महिला मंडल बनाने की भी सोच रही हैं। वह हस्तकला में भी बेहद निपुण हैं। उनका कहना है कि उनके पति ने उन्हें सीख दी थी कि सच्चाई और ईमानदारी से काम करना चाहिए। दूसरों की मदद करनी चाहिए। वह गांव में कोई भी गलत काम होता देखकर उसके विरोध में बोलती हैं। वह गांव की महिलाओं के लिए रोज़गार शुरू करवाना चाहती हैं जिससे उनकी आमदनी बढ़ सके। वह स्वयं साक्षर होने की भी कोशिश कर रही हैं।

—रीता चतुर्वेदी

क्या आपको सही राशन मिलता है?

राशन! राशन! राशन!
गेहूं-चावल-चीनी-तेल
होता गायब देखो खेल

क्या आप राशन से दुखी नहीं हैं?

क्या आपको राशन समय पर मिलता है?

क्या राशन का तौल सही होता है?

क्या दूकानदार पर्ची पर सही तौल का सही रेट लिखता है? पर्ची देता भी है या नहीं?

क्या आपको राशन से मिलने वाले सामान का असली तय दाम और मात्रा मालूम है? क्या दूकानदार उसी रेट पर राशन देता है? बचा हुआ पैसा लौटाता है या नहीं?

दिल्ली में मिलने वाले राशन की जानकारी प्रति माह के हिसाब से—

	गेहूं खाने वाले	चावल खाने वाले
गेहूं	10 किलो	9 किलो
चावल	2.5 किलो	16 किलो
चीनी	800 ग्राम	800 ग्राम

मिट्टी का तेल 5 यूनिट (व्यक्तियों) के लिए हर 15 दिन पर 6 लिटर।

राशन के दाम

	वर्ष 1991 में	वर्ष 1992 में
गेहूं	2.48 रु./किलो	2.96 रु./किलो
चावल	3.93 रु./किलो	4.86 रु./किलो
चीनी	6.10 रु./किलो	6.90 रु./किलो

कुछ जगह राशन महीने में एक बार मिलता है।

कुछ जगह हर 15 दिन में। अगर आपका राशन-कार्ड नहीं है तो जानिए राशनकार्ड हर नागरिक का हक़ है।

सबला संघ जन सुविधा कमेटी नंद नगरी (सुंदर नगरी) दिल्ली ने यह आंकड़े इकट्ठा किए।

इसी ढांचे पर यदि आप अपने गांव/इलाके की जानकारी हमें भेजें तो हम उसे राष्ट्रीय महिला आयोग तक पहुंचाएंगे। इसके अलावा राशन

संबंधी जो भी शिकायतें हों उन्हें भी लिख भेजें।

यह राशन प्रणाली इसलिए शुरू की गई थी कि सबको, खासकर गरीब जनता को उचित दामों पर अनाज मिल सके। इस बढ़ती मंहगाई में हमारा एक यही सहारा है। हमें डर है कि नई आर्थिक नीति के तहत् हमारा यह सहारा भी न छिन जाए। राशन की समस्या सभी की समस्या है। राष्ट्रीय महिला आयोग जो मुद्दे उठाना चाहता है उसमें राशन वितरण प्रणाली में सुधार का मुद्दा भी है। यदि हम इस बारे में सजग हों तभी यह संभव हो पाएगा।

आइए, इसे एक जन-अभियान बनाएं। हमारी मांगें हैं—

दूकानें समय पर खुलनी चाहिए।

हर दूकान के सामने तख्ती पर लिखा हो कि कितना राशन आया है। हर वस्तु की कीमत प्रति किलो भी लिखी हो।

राशन का तौल सही हो।

दूकान पर नमूने का चार्ट हो।

दुकानदार राशन की रसीद ज़रूर दे।

जनता की यह पुकार—

सही राशन पाना हमारा अधिकार
गड़बड़-घोटाले का हो पर्दाफ़ाश

सबला संघ, नई दिल्ली

पाठकों की कलम से

आज दहेज वर की पढ़ाई-लिखाई और पालन पोषण के खर्चे के मुआवजे के रूप में मांगा जाता है। कन्यादान के साथ होता है धन का दान, दहेज का प्रकोप बढ़ता ही जा रहा है। लड़के के माता-पिता को बहू नहीं सोने का अंडा देने वाली मुर्गी चाहिए।

दहेज का खत्म होगा अत्याचार
जब बेटी होगी समझदार
तो क्यों न बेटी को अच्छे से पढ़ाएं
और दहेज के कुचक्र से छुटकारा पाएं

—अल्पना शर्मा

मांग अधिकार तू

बिन मांगे मोती मिले मांगे मिले न भीख
बहना, यह भ्रम तोड़ ले सुनो हमारी सीख
सुनो हमारी सीख मांगने से अधिकार मिलता है
न मांगे तो दुखिया बन, कौन तेरी सुनता है।

—शोभा कुमारी

गरिमा नारी की

नारी, तू सचमुच है बड़ी महान
तूने पैदा किए तिलक और सुभाष
कारण इन्हीं के हुआ, मेरा देश महान
तूने पैदा किए कृष्ण और राम
जिन हस्तियों पर हमें है गुमान
दुर्योधन, कंस जैसों को भी
दिया तूने ममता का स्नेह-दान
वक्त आने पर झांसी की रानी लक्ष्मी
देश के हित पर हो गई कुर्बान
कभी सीता कभी सावित्री बनी
किन-किन रूपों में करूं तेरा गुणगान
मदर टेरेसा में करुणा की तस्वीर
इन्दिरा बनी देश की प्रधान मंत्री
मां, पत्नी, बहन, बेटी के रूप में
तेरी गरिमा ने ली ऊंची उड़ान
नतमस्तक हो तुझे हे मां करती
कोटि-कोटि बारंबार प्रणाम

हेमलता, प्रेरक

'सबला' पत्रिका महिला हित में सर्वश्रेष्ठ नारी चेतना के प्रतीक के रूप में स्वयं एक स्तंभ है जो नारी में एक चेतना उत्पन्न कर संघर्ष की राह पर ले जाती है। यदि हर नारी इसका अध्ययन करे तो संपूर्ण नारी जगत में एक चेतना उत्पन्न होगी और यह राष्ट्र की विकास धारा में विशेष सहयोगी बनेगी।

—एम॰आर॰ प्रेमी पटनायक
लोहानी सराय (सहारनपुर, उ॰प्र॰)

'सबला' अंक अक्टूबर-नवम्बर पढ़ा। ऐसा लगा कि 'सबला' नारियों को जगा रही है। नारी जागे तो देश जागे। ग्रामीण महिला उत्थान के लिए बहुत उपयोगी है।

—शांति रस्तोगी
लखनऊ

आज की नारी

आज नहीं बदनसीब नारी
कहती है यह दुनिया सारी
नहीं शोषित अब उसकी काया
परिवर्तन है अब उसमें आया
थी प्राचीन काल में वह अबला
आज बन गई है वह सबला
नारी में है अद्‌भुत शक्ति
आज वह चाहे अपनी मुक्ति
आज अधिकार वह अपना मांगे
हो गई अब वह पुरुष से आगे
जब से लगती जग को प्यारी
महक उठी चमन की फुलवारी

चेतना खरे, 14 वर्ष
कक्षा 11वीं, देवास

'सबला' पत्रिका बहुत ही रोचक, उपयोगी तथा शिक्षाप्रद है। नारी जागृति एवं विकास के क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रही है।

—स॰अ॰ मेहता
किशनगंज (बिहार)

नर से बढ़कर नारी है इस तथ्य का
हर नर को होवे सच्चा भान
नर पिछड़ रहा है नारी के पिछड़ेपन से
ध्यान जमाओ नारी शिक्षा और ज्ञान
भारत मां का मान बढ़ाना चाहो तो
भारत मां की बेटियों का सम्मान बढ़ाओ

—शंभु सिंह राजबल
खरेड़ा (राज॰)

स सदा समझ से काम करे जो
देश समाज में नाम करे वो
ब बच्चों की शिक्षा-दीक्षा
और उन्नति की बात करे जो
ला लाख परेशानी आ जावे
पर हिम्मत से काम लेवे जो
ना नामुमकिन राहों को खोले
सफल अपना वर्तमान करे जो
री रीता नहीं हो मन उसका
हर नारी को सबला बनने का प्रोत्साहन करे जो।

—ओम पारीक, रावतसर (राज॰)

नारी मुक्ति की ललकारों से
गूंज उठे आसमान
रूढ़िवादियो और शोषको
सोचो अब अंजाम

माधव चव्हाण

'सबला' के लेखों पर चर्चा

अनिता ठैनुआं

'सबला' अंक : फरवरी-मार्च '92

हमारी बात—गांव जटौली और पक्का बाग में इस लेख पर चर्चा हुई। औरतों की प्रतिक्रिया थी—

"हमारी बेटियों का जीवन हमारे हाथ में नहीं है। यह तो भगवान के हाथों में है।"

अनिता—"बात जीने-मरने की नहीं है। इतना तो हमारे हाथ में है कि हम अपनी बेटियों को पढ़ा-लिखाकर खूब होशियार बनाएं।"

महिलाएं—"पढ़ाने-लिखाने की बात तो मर्द ही सोच सकते हैं। हम तो लड़कियों को घर के काम ही सिखा सकते हैं।"

परिवार से उनका मतलब है कि सब लोग इकट्ठा साथ रह सकें। इसमें चाहे किसी के साथ अन्याय हो रहा हो या नहीं। गांव में आज भी लड़कियों के साथ अन्याय होता है। बेटी को पराई अमानत ही मानते हैं। बाप के घर रहती है तो खाने के बदले उनसे काम लिया जाता है।

'खुला पत्र बेटियों के नाम'—गांव चिकसाना में चर्चा।

क्या आप दादी, मां, चाची, बहिन की इज्ज़त करती हैं?

इस पर सभी लड़कियों की प्रतिक्रिया थी कि हम उनकी इज्ज़त नहीं करतीं। वह हमारे संपर्क में ज़्यादा रहती हैं। उनसे हमें ज़्यादा अपनापन लगता है। भाई, बाप, चाचा, ताऊ हमसे ज़्यादा संपर्क नहीं रखते। हम उनसे डरते भी हैं। इसलिए ज़्यादा इज्ज़त करते हैं।

क्या आपने अपने बारे में कभी सोचा है?

सभी का कहना था हम कभी अपने बारे में नहीं सोचते। हमें कभी महसूस ही नहीं हुआ कि समाज में हमारा भी कोई स्थान है। हमें भी सोचने और इज्ज़त से जीने का अधिकार है।

क्या आप पढ़ना चाहती हैं?

गांव में बहुत कम लड़कियां पढ़-लिख पाती हैं। शुरू से ही सोच बना दी जाती है कि लड़कों को पढ़ना है। हमें घर का काम करना है। न घरवाले रुचि लेते हैं, न गांव में सुविधाएं हैं।

लड़कियों के साथ आत्मनिर्भर शब्द जोड़ना अटपटा लगता है। लड़कों को ही यह शिक्षा दी जाती है। लेकिन अब बढ़ती मंहगाई और दहेज की समस्या में मां-बाप लड़की को आत्मनिर्भर बनाने की सोचने लगे हैं। शुरू से तो सोचते नहीं हैं। जब वह तलाकशुदा, विधवा या पति द्वारा छोड़ दी जाए तब आत्मनिर्भरता की शिक्षा देते हैं। क्या कमज़ोर नींव पर अच्छा महल खड़ा हो सकता है?

गांव में औरतों को कोई रास्ता दिखाने वाला नहीं है। औरत में ताक़त तो है पर उसको आजमाए तो मर्दानी कहकर उसका अपमान किया जाता है। फिर भी आज औरतें आगे बढ़ रही हैं। हमें बचपन से ही सिखाया जाता है कि भाई व पिता ही हमारे रक्षक हैं। शादी के बाद पति। हमें दूसरों के सहारे जीना सिखाया जाता है मगर अब लड़कियों ने अपनी रक्षा खुद करनी शुरू कर दी है।

"क्या मैं बोझ हूं"—चिकसाना के गांव उदरा में चर्चा।

हर लड़की का कहना था कि ऐसा हमारे घर

वाले सोचते हैं। उसको पत्थर कहा जाता है। किसी को खुशी नहीं होती। क्या बेटी बेटे से कम है?

शुरू में सभी महिलाएं बोलीं कि बेटी बेटे की बराबरी नहीं कर सकती? लेकिन जब मंजू, बबली, सोनू आदि लड़कियों की चर्चा हुई जो अपने पैरों पर खड़ी हैं और परिवार चला रही हैं तो उन्होंने माना कि औरत मर्द से कम नहीं है। वह फिजूलखर्ची नहीं करती। सारी कमाई घर में खर्च करती है। मर्द आधी कमाई खुद अपने ऊपर खर्च करता है। आज बेटी बेटे से किसी क्षेत्र में कम नहीं है।

'महिला सुरक्षा कानून' पर चर्चा।

किसी भी महिला को इन कानूनों के बारे में कोई जानकारी नहीं थी।

"अगर आपकी बेटी के साथ बलात्कार हो तो आप क्या करेंगी?"

एक महिला—"अगर लड़का धींग (बड़े) घर का होगा तो लड़की वाले चुप कर जाएंगे। क्योंकि बड़े घर वालों के पास ताक़त होती है। पुलिस को पैसा देकर मामले को दबा देते हैं। गांव में लोगों को अपने हक़ों की भी जानकारी नहीं होती है। कभी-कभी अपने स्तर पर भी गांव में मामला निबटा दिया जाता है। लड़की की गलती न होते हुए भी उसे कसूरवार ठहरा दिया जाता है।"

अनिता—"लड़की को इस काबिल बनाओ कि उसके साथ कोई ज़ोर ज़बर्दस्ती न कर सके। ज़बर्दस्ती के मामले में चुप होकर नहीं बैठना चाहिए। इस तरह के अत्याचार हों तो गांव में सबके सामने दोषी को दंड दिया जाना चाहिए।"

किसी भी महिला को दहेज विरोधी कानून की जानकारी नहीं थी। लड़की वाले को दहेज तो देना ही पड़ता है। यह तो पुराने ज़माने से चला आ रहा है।

अनिता—"सरकार से मैं प्रश्न पूछना चाहूंगी कि अगर महिला अपने प्रति किए गए अपराध का मामला दर्ज कराती है तो कोर्ट में उसका फैसला होने में सालों क्यों लग जाते हैं? क्या यह फैसले तुरंत नहीं होने चाहिए।"

"आवाज़े निसवां" संगठन लेख पर चर्चा—गांव पक्का बाग।

गांव में बहनें आज भी एक घुटनभरी जिंदगी बिता रही हैं। बिना किसी सहारे के वे अपनी आवाज़ उठा भी नहीं सकतीं। मुस्लिम औरतें काफी परेशानियों में जीवन बिता रही हैं। उन्हें बड़ा परिवार बिलकुल पसंद नहीं है। उन्होंने परिवार नियोजन के साधनों के बारे में जानकारी चाही। उन्हें बताया जाता है कि ऐसा कुरान में लिखा है कि बच्चों को होने से नहीं रोकना चाहिए। आपरेशन नहीं करवाना चाहिए। धार्मिक कट्टरता की जंजीरों से उन्हें बुरी तरह जकड़ा हुआ है।

मुस्लिम औरतों के एक बड़े समूह से चर्चा हुई। औरतें काफ़ी दुखी थीं। उन्हें पढ़ाया-लिखाया नहीं जाता। वे बहुत पिछड़ी हुई हैं। वे हिंदू औरतों को ज़्यादा सम्मान नहीं देतीं। हमने उनसे स्वास्थ्य के बारे में चर्चा की तो वे काफी खुश हुईं। उनके बीच अगर काम किया जाए तो उनकी हालत में सुधार आ सकता है। □

'सबला' से लक्ष्मी का जीवन सुधरा

बहनों, यह एक सच्ची घटना है। लक्ष्मी नाम की एक 23-24 वर्षीय युवती हमारे घर काम पर लगी। चुपचाप रहकर वह सब काम करती, किसी से कुछ न कहती। पर उसके चेहरे से साफ झलकता कि अंदर ही अंदर कोई परेशानी उसे लगातार सता रही है।

बातचीत करने पर यह मालूम हुआ कि अपनी ससुराल से भागकर वह यहां आई थी। बारह वर्ष की छोटी उम्र में ही उसका विवाह हो गया था। वह केवल तीसरी कक्षा तक ही पढ़ी थी। उसका पति नशा करता था। इससे घर की हालत बिगड़ गई थी। शराब पर पैसे बेकार करने की वजह से पति-पत्नी में अक्सर झगड़ा हो जाता। पति उसे पीटता भी था।

घर की आर्थिक स्थिति दिन-ब-दिन गिरती जा रही थी। लक्ष्मी के चार बच्चों की देखभाल नहीं हो पा रही थी। घर में उनके अलावा लक्ष्मी के सास-ससुर, देवर, जेठ-जेठानी अपने दो बच्चों के साथ रहते थे। कमाने वाली सिर्फ लक्ष्मी और उसकी सास ही थीं। वे कुछ घरों में झाड़ू-पोंचा, बर्तन व कपड़े धोकर अपने पूरे परिवार की गुज़र-बसर करती।

लक्ष्मी की जेठानी को एक अच्छी नौकरी भी मिल रही थी पर उसने यह कहकर इंकार कर दिया कि उसके मायके में कभी किसी औरत ने नौकरी नहीं की। जब लक्ष्मी काम पर जाती तो जेठानी उसके बच्चों की देखभाल भी न करती, कहती कि हम अपने बच्चे संभालें या उसके। ससुर बीमार रहते और देवर-जेठ अपने भाई की देखादेखी काम पर जाने से कतराते। इस कलेशपूर्ण वातावरण में भी लक्ष्मी जैसे-तैसे निभाती रही, पर एक दिन जब उसके पति ने शराब के लिए पैसे न मिलने पर लक्ष्मी को बहुत पीटा और उसे जान से मार डालने की धमकी दी तो उसे घर से भागना पड़ा और वह हमारे पास आ गई। अपनी गृहस्थी टूटने और एक असुरक्षित जीवन के कारण वह बेहद परेशान थी।

बहुत चाहते हुए भी मैं सही दिशा के अभाव में लक्ष्मी की मदद नहीं कर पा रही थी। संयोग से उन्हीं दिनों 'सबला' पुस्तिका की कुछ प्रतियां मेरे हाथ लगीं। इनसे कुछ ऐसी संस्थाओं की कार्यविधि और पते मालूम पड़े जहां लक्ष्मी जैसी मुसीबत में पड़ी लड़कियों की निःशुल्क देखभाल होती है। साथ ही उनकी पारिवारिक समस्याएं सुलझाने में, अपने पैरों पर खड़े होने में पूरी-पूरी मदद की जाती है।

'सबला' से हमने 'शक्तिशालिनी' नामक संस्था का पता लेकर लक्ष्मी को दिया और समझा-बुझाकर उसे वहां भेजा। वहां के दफ्तर की दीदी ने उसकी समस्या ध्यानपूर्वक सुनी और उसे अपने आश्रयगृह में भरती कर लिया।

लक्ष्मी दो महीने आश्रयगृह में रही। फिर एक दिन अचानक वह खुश चेहरे के साथ हमारे घर आई। मालूम हुआ कि 'शक्तिशालिनी' की मदद और सही मार्ग-दर्शन से उसकी बिगड़ी गृहस्थी संवर गई है। अब लक्ष्मी खुशी से अपनी ससुराल में रहती है।

अलका नांगिया

आधा भारत नारी है
तो फिर वो क्यों बेचारी है
औरत को भी काम चाहिए
काम का पूरा दाम चाहिए

कम उम्र में शादी की गाड़ी में जो जोती गईं
बच्चियां बन बन के मांएं जिंदगी खोती गईं
न ये बोलें न ये डोलें मन की कुछ न कर सकें
काटे गए हैं पंख इनके ऊंची ये न उड़ सकें

—कमला भसीन